ओ३म्

आर्य जगत्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 17 मई 2026 | आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र | सप्ताह रविवार, 17 मई 2026 से 23 मई 2026

ज्येष्ठ कृ. 08 ● वि० सं०-2082 ● वर्ष 67, अंक 20, प्रत्येक मंगलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 202 ● सृष्टि-संवत् 1,96,08,53,126 ● पृ.सं. 1-12 ● मूल्य - 5/- रु. ● वार्षिक शु. 300/- रु.

डी.ए.वी. इंटरनैशनल स्कूल अमृतसर में मेधावी एवं प्रतिभावान विद्यार्थी हुए सम्मानित

डी.ए.वी. इंटरनैशनल स्कूल, अमृतसर के मेधावी एवं प्रतिभावान विद्यार्थियों को पुरस्कार देकर सम्मानित किया गया। इस अवसर पर डॉ. पूनम सूरी प्रधान डी.ए.वी. प्रबन्धकर्त्री समिति मुख्य अतिथि के रूप में सपत्नीक उपस्थित हुए। विद्यालय के छात्र–छात्राओं द्वारा ओ३म् की महिमा का बखान करता मधुर वैदिक भजन गाया गया।

मुख्य अतिथि ने जे.ई.ई. परीक्षा में अति उत्तम प्रदर्शन करने वाले और बोर्ड परीक्षा में 90 प्रतिशत से अधिक अंक प्राप्त करने वाले विद्यार्थियों को पुरस्कार देकर सम्मानित किया।

डॉ. पूनम सूरी ने कहा कि सफलता का मूलमंत्र–दृढ़ निश्चय, ऊँचे सपने, अच्छी सोच और ईश्वर में पूर्ण आस्था है। इस विद्यालय के विद्यार्थी से विशिष्ट उपलब्धियाँ प्राप्त कर रहे हैं इसका संपूर्ण श्रेय प्रिंसीपल डॉ. अंजना गुप्ता को जाता है। प्रधान जी ने कहा कि समस्त डी.ए.वी. संस्थाएँ विद्यार्थियों को शिक्षा के साथ साथ चरित्र, नैतिक मूल्य और राष्ट्रप्रेम जैसे गुणों को ग्रहण करने के लिए प्रेरित करती हैं।

प्रिं. डॉ. अंजना गुप्ता ने मुख्य अतिथि का आभार व्यक्त करते हुए कहा कि प्रधान जी की प्रेरणा, निरन्तर सहयोग और सुमार्गदर्शन से ही विद्यालय निरंतर प्रगति के पथ पर अग्रसर हो रहा है। प्राचार्या ने कहा डी.ए.वी. इंटरनैशनल के विद्यार्थी शिक्षा के साथ–साथ खेलों और अन्य सांस्कृतिक गतिविधियों में जो विशेष उपलब्धियाँ प्राप्त कर रहे हैं।

सोहन लाल डी.ए.वी. शिक्षा महाविद्यालय अम्बाला में चतुर्थ 100 कुण्डीय हवन

सोहन लाल डी.ए.वी. शिक्षा महाविद्यालय, अम्बाला शहर के परिसर में राष्ट्रव्यापी 'No नशा Nation' अभियान के अंतर्गत चतुर्थ 100 कुण्डीय वैदिक हवन का भव्य एवं श्रद्धामय आयोजन किया गया।

यह आयोजन आर्य युवा समाज के राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री योगी सूरी से प्रेरित रहा। इस अभियान का उद्देश्य युवाओं को नशे के दुष्प्रभावों से दूर रखते हुए राष्ट्र के निर्माण हेतु जागरूक करना है।

कार्यक्रम का शुभारंभ डी.ए.वी. गान से हुआ।

मुख्य अतिथि श्री जे. एस. नैन (पूर्व प्राचार्य, डी.ए.वी. कॉलेज लाहौर तथा प्रधान, आर्य समाज अम्बाला शहर) ने अपने संबोधन में डॉ. पूनम सूरी जी की दूरदर्शी सोच एवं राष्ट्रहित में किए जा रहे इस अभियान की भूरि–भूरि प्रशंसा की। विशिष्ट अतिथि के रूप में श्री जी. एस. चोपड़ा की गरिमामयी उपस्थिति रही।

प्राचार्या डॉ. पूजा ने कहा कि वैदिक अनुष्ठान एवं जनजागरण कार्यक्रम युवा पीढ़ी में आत्मसंयम, अनुशासन एवं सकारात्मक दृष्टिकोण का विकास करते हैं।

100 कुण्डों में सम्पन्न इस विशाल हवन में विद्यार्थियों, शिक्षकगण एवं कर्मचारियों ने अत्यंत श्रद्धा एवं उत्साहपूर्वक सहभागिता की।

आर्य समाज मॉडल टाउन पानीपत में गुरुकुल की प्रथम वर्ष गाँठ

आर्य समाज मॉडल टाउन के प्रधान शशि चड्ढा व महामंत्री चंद्र मोहन गुलाटी ने संयुक्त रूप से बताया कि एक वर्ष पूर्व आचार्य किरणमयी व ब्रह्मचारिणी सुखदा जी के साथ कन्याओं को धनुर्विद्या, जूडो–कराटे व संगीत शिक्षा में प्रशिक्षण देकर बहुर्मुखी कलाओं से

आर्ष कन्या गुरुकुल आरम्भ किया गया था जो हम सब के लिए एक सपना था। हमें प्रसन्नता है प्रत्येक सदस्य ने तथा पानीपत के लोगों का इतना सहयोग मिला कि एक वर्ष बीतते पता भी नहीं चला। इस वर्ष कन्याओं की संख्या 25 से बढ़ा कर 50 कर दी गई है।

चरित्र निर्माण व वैदिक शिक्षा तथा आत्म रक्षा की विद्या में निपुण करने के लिए सुश्री ब्रह्मचारिणी प्रधानाचार्या सुनीति आर्षविद्यामणि के नेतृत्व में संपन्न किया जा रहा है।

प्रथम वर्षगांठ पर गुरुकुल की कन्याओं व ब्रह्मचारिणियों द्वारा विशेष प्रस्तुति दी गई जिसे देखकर उपस्थित तथा पानीपत के लोग अचंभे में थे कि किस प्रकार एक वर्ष में इतना निपुण कर दिया हैं।

कन्याओं ने विभिन्न खेलों में भाग लिया तथा सायः में विभिन्न प्रतियोगिताएं की गई व बच्चों को पुरस्कृत भी किया गया।

जो सब जगत् के पदार्थों को संयुक्त करता और सब विद्वानों का पूज्य है और ब्रह्मा से लेके सब ऋषि मुनियों का पूज्य था, है और होगा, इससे उस परमात्मा का नाम **'यज्ञ'** है। क्योंकि वह सर्वत्र व्यापक है। स. प्र. समु. १

{संपादक – पूनम सूरी}

ओ३म्
आर्य जगत्
सप्ताह रविवार, 17 मई 2026 से 23 मई 2026

आओ, देवों के मार्ग पर चलें

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

आ देवानामपि पन्थामगन्म, यच्छक्नवास तदुनुप्रवोढुम्।
अग्निर्विद्वान्त्स यजात् स इद्धोता, सोऽध्वरान्त्स ऋतून् कल्पयाति।।

अथर्व 16.56.3

ऋषिः **ब्रह्मा।** देवता **अग्निः।** छन्दः **त्रिष्टुप्।**

● (**अपि**) क्या (**देवानां**) देवों के (**पन्थां**) मार्ग पर (**आ– अगन्म**) [हम] चलें? [हाँ], (**यत्**) यदि (**तत् अनुप्रवोढुम्**) उस पर स्वयं को चलने में (**शक्नवाम**) समर्थ हों। (**अग्निः**) आत्मा (**विद्वान**) विद्वान् है, (**सः**) वह (**यजात्**) यज्ञ करे, (**सः**) वह (**इत्**) सचमुच (**होता**) होम–निष्पादक है। (**सः**) वही (**अध्वरान्**) यज्ञों को और (**सः**) वही (**ऋतून्**) ऋतुओं को (**कल्पयाति**) रचाये।

● आओ, हम देवों के मार्ग पर चलें। यज्ञ के तंतु से बंधे रहना ही देवों का मार्ग है। देखो,ये सूर्य, चन्द्र, अग्नि, पृथिवी, ऋतु, संवत्सर आदि देव कैसे 'यज्ञ' के मार्ग पर चल रहे हैं। कभी उनके यज्ञ–पालन में व्यतिक्रम नहीं होता। शरीर में भी मन, बुद्वि, प्राण, इन्द्रियाँ आदि देव कैसे संगठित हाक देवयान का अवलम्बन कर शरीर–यज्ञ को चला रहे हैं। समाज में भी 'देव' पदवी को पाये हुए महापुरुष 'यज्ञ' के ही पथ पर चल रहे हैं। और, सबसे बड़ा देवों का देव परमात्मा भी निरन्तर देव–मार्ग पर चलता हुआ इस ब्रह्मांड–यज्ञ का सम्पादन कर रहा है। हम चाहते हैं कि हम भी इस देव–मार्ग के पथिक बनें। क्या तुम कहते हो कि इस मार्ग पर चलना अति कठिन है, तलवार की धार पर चलने के समान है, अतः पहले अपनी शक्ति को तोल लो कि तुम इस पर स्थिर रह भी सकोगे या नहीं, उसके पश्चात् इस मार्ग पर पग बढ़ाना? सुनो, हमने अपने सामर्थ्य को भलीभांति परख लिया है। हमारा आत्मा 'अग्नि' है, अग्रणी है, तेज का पुंज है, ज्योतियों की ज्योति है। वह 'विद्वान' है, देवों की राह पर चलना और चलाना जानता है। अतः हमें देव–प्रदर्शित यज्ञ–मार्ग भटक जाने का कोई भय नहीं है। हम निश्ंचित होकर उसके हाथों में अपनी 'यज्ञ' की पतवार सौंप रहे हैं। वह 'होता' है, यज्ञ– निष्पादन में कुशल है,संस्कृत हवि का होम करने में निष्णात है। वह जानता है कि यज्ञ को 'अध्वर' अर्थात् हिंसा–रहित ही होना चाहिए। भद्रजनों को हानि पहुँचाने के उद्देश्य से किया गया यज्ञ यज्ञ नहीं है। हमारा आत्मा 'अध्वर' यज्ञों को रचाये और वही यह भी देख कि किस यज्ञ के लिए कौन–सी ऋतु, कौन–सा समय उपयुक्त है क्योंकि काल–अकाल का विचार किये बिना प्रारम्भ किया गया यज्ञ सफल नहीं होता। आओ, हम देव–पथ के पथिक बनें।

❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

प्रभु–भक्ति

● **महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती**

गत अंक में हमने मन के नकारात्मक व सकारात्मक पहलुओं का वर्णन स्वामी जी की पुस्तक 'प्रभु भक्ति' से किया। मन वास्तव में बहुत चंचल है। इसे अष्टांग योग आदि से नियन्त्रित करके चलने से आत्मा अत्यन्त बलवती हो जाती है, किन्तु यदि इस पर नकारात्मकता का रंग चढ़ गया तो यह गर्त के गड्ढे में ऐसा गिराएगा कि उठने का साहस भी नहीं कर पाएँगे। इसलिए इसे नकारात्मक सोच से दूर रखकर, सकारात्मक चिंतन की ओर लगा। यम, नियम, सत्संग, वेदादि के पठन–पाठन से, ध्यान, उपासना, आदि से इसे नियन्त्रित करके तो देख, आपका जीवन स्वर्णिम हो जाएगा। यह मन शत्रु नहीं वरन् आपका सर्व श्रेष्ठ मित्र बन जाएगा। संसार में सभी व्याधियाँ आपके जीवन से क्षण भंगुर हो जाएँगी। जब तक यह मन कौआ था जीवन को क्षीण कर रहा था, अब आपने इसे अपने सद्प्रयासों से हंस बना लिया, अब यह मोती चुनने लगा...।

.... अब आगे

भक्त की पुकार

सा परानुरक्तिरीश्वरे।

{शाण्डिल्य ऋषि का भक्तिदर्शन (1.1.2)}

प्रियतम ! न बल है, न शक्ति है। रोगी शरीर तेरी पूजा की सामग्री एकत्रित करने में भी असमर्थ है। तेरे इस मन्दिर की मरम्मत करने का भी अब साहस नहीं होता। न जप–बल, न तप–बल, न बाहु–बल, न धन–बल, किसके सहारे तेरे निकट पहुँचूँ ? ऋषि यह कह गये हैं कि **"नायमात्मा बलहीनेन लभ्यः"** अर्थात् बलहीन व्यक्ति आत्म–प्राप्ति नहीं कर सकता। तो फिर क्या मैं यहीं पड़ा रह जाऊँगा, इसी भँवर में गोते खाने के लिए ? न मन्त्र आते हैं न तन्त्र, न यह जानता हूँ कि तेरी स्तुति कैसे करुँ, किन शब्दों में तुझे पुकारुँ। कोई शब्द ही मेरे पास नहीं है, फिर तेरे गुणों का वर्णन कैसे करुँ ? तेरा आह्वान कैसे किया जाता है, इससे मैं अनभिज्ञ हूँ। कहते हैं प्राण–अपान का संयोग कर देने से तू मिल सकता है। मुझे तो यह विधि भी नहीं आती। ध्यान कैसे लगाया जाता है, इससे भी मैं परिचित नहीं। कोई मुद्रा भी मैं नहीं जानता, न हठ–योग, न ध्यान–योग, न कर्म–योग, न ज्ञान–योग। किसी में भी मेरा अधिकार नहीं हो सका। किस विधि प्यारे तुझे पा सकूँगा, कोई मार्ग दिखलाई नहीं देता। रोना भी तो नहीं आता ! यदि रोऊँ भी तो क्या कहकर रोऊँ ? हाँ, केवल एक और निश्चित रूप से एक बात जानता हूँ कि तू मेरी माता है और ऐसी माता है जो क्लेश हरनेवाली है–

नहीं संयम, नहीं साधना,
नहीं यज्ञ–व्रत–दान।
मात भरोसे रहत है,
ज्यों बालक नादान।।

मैंने यह भी तो सुना है माता ! कि जब तक तुम अपनी कृपा का पात्र किसी को नहीं बनातीं, तब तक न उसकी मेधा काम आती है, न वेद पढ़ा कुछ लाभ पहुँचाता है, तुम स्वयं जिसको चुन लो, उसी को तुम्हारे दर्शन का अधिकार मिलता है।1 तो मेरे ऊपर कृपादृष्टि कब होगी ? मैं कब तक तेरे द्वार पर खड़ा माँ–माँ पुकारता रहूँगा ? माँ, तूने अपनी वाणी में कहा है–

न ऋते श्रान्तस्य सख्याय देवाः।

(ऋ. 4.33.11)

{1. नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो न मेधया न बहुना श्रुतेन। यमेवैष वृणुते तेन लभ्यस्तस्यैष आत्मा वृणुते तनूँ, स्वाम्।। कठोपनिषद् 1–22–3।। मुण्डक. 3–2–3।। 'यह आत्मा न वेद से पाया जा सकता है, न मेधा से, न बहुत सुनने से। हाँ, जिसको यह आप चुन लेता है, वही उसे पा सकता है, उसके लिए यह आत्मा अपना स्वरूप खोलता है।'}

पूर्ण प्रयत्न करके जब तक कोई थक नहीं जाता, तब तक ईश्वर की मित्रता प्राप्त नहीं होती, और मैं तो अब थक गया हूँ न ! कितनी दूर से चला हूँ ! चला क्या हूँ रींगता आया हूँ। माँ, तेरे चरणों में आ पड़ा हूँ। सारे अंग चूर हो गये हैं। मेरे जलभरे नेत्र, मेरा मलिन मुख, मेरी काँपती हुई भुजाएँ, माता ! क्या तेरे हृदय पर चोट नहीं करतीं ? माँ तो अपने शिशु को दुःखी देखकर एक क्षण की भी देर नहीं करती, सौ काम छोड़कर भी उसे गोद में उठाकर प्यार करती है, पवित्र स्तनों से अमृत पिलाती है। माँ ! मुझे भी ले–ले न

अपनी गोद में! उठा ले मुझे भी इस हीन अवस्था से। पिला दे अमृत, पिला दे ! अब बहुत प्रतीक्षा न करा !

हर जननी ! मैं बालक तेरा,
काहे न औगन बगसहु मेरा।
सुन अपराध करे दिन केते,
जननी के चित रहे न तेते।।

पापों की गठरी कितनी भारी हो गई है ! अब तो उठाने की शक्ति नहीं रही। कितने ही भक्तों ने बतलाया है कि तू पापियों के पाप दूर हटा देता है, तू पतितों को उठाता है, तू अधर्मियों का उद्धार करता है। क्यों जी ! ये सब बातें क्या ऐसे ही कही जाती हैं ? यदि ऐसे ही नहीं तो मुझसे अधिक दयनीय और कौन होगा ? पतितपावन ! मेरे–जैसे पतित का उद्धार करके तुम बहुत बड़े पतितोद्धारक कहलाओगे। यदि तेरे द्वार से केवल अच्छे मनवाले और योगियों को ही शिक्षा मिलती है, केवल ज्ञानी ही तृप्त होते हैं, तो फिर मैं क्या व्यर्थ चिल्ला रहा हूँ ? कहो तो सही, सच्चे साहब ! स्वस्थ पुरुष या स्त्री को वैद्य के पास अथवा अस्पताल में जाने की क्या आवश्यकता है ? धनी भीख माँगने धनी के दरबार में क्यों जाये ? जिसके वस्त्र ठीक हैं, उसे दर्जी का दरवाजा देखने की क्या ज़रुरत है ? फट गये हैं जिसके कपड़े काँटों से उलझ–उलझकर, वही दर्जी को ढूँढता फिरेगा। जिसके मन–रूपी कपड़े हो गये हैं मैले, वही धोबी के पास जायेगा। ओ धोबी ! मैं मैले ही कपड़े लेकर तेरे पास आया हूँ–

धोबिया, दाग दिलाँ दे धो दे !

मेरा मन रोगी है ओ परम–वैद्य ! इसकी चिकित्सा कर दे। मेरे आर्त्तनाद को सुन और मेरी पीड़ा को हर दे। यदि तूने भी गुण और अवगुण देखकर ही भिक्षा देनी है तो तुझे 'समदर्शी' कहनेवाले यह वचन बोलने से पहले सौ बार सोच लिया करेंगे। सूरदास तो आपके इसी गुण को देखकर इकतारा हाथ में लिए रो–रोकर पुकार उठा था–

अवगुण चित न धरो प्रभु मेरे!
अवगुण चित न धरो !
समदर्शी है नाम तिहारो,
चाहो तो पार करो।।
इक नदिया इक नाल कहावत,
मैलो ही नीर भरो।
जब मिलकर दोउ एक वर्ण भयो,
सुरसरी[2] नाम परो।।
इक लोहा पूजा में राख्यो,
इक घर बधिक[3] परो।
पारस गुण–अवगुण नहीं देखत,
कंचन करत खरो।।
प्रभु जी, मेरे अवगुण चित न धरो !

{2. गंगा 3. कसाई।}

यदि आपने तोल–माप ही से काम लेना है तो फिर हमें कोई और द्वार बतलाओ जहाँ हमें भी भिक्षा मिल सके, परन्तु –

तेरे दर को छोड़कर
हम बेनवा जायें कहाँ ?
या बता दे और कोई
अपने–जैसा घर हमें।।

नहीं छोड़ेंगे तेरी चौखट। अब इसी द्वार पर प्राणों का अन्त होगा। कब तक तू नहीं सुनेगा ? हमें भजन करना नहीं आता, न सही। हमें गुण–वर्णन की विधि नहीं आती तो क्या हुआ ! हम तो तुझे पुकारते ही चले जायेंगे, तेरा ही नाम, हाँ तेरा ही नाम, और कुछ नहीं हम जानते, केवल तेरा नाम–

ओम् का सिमरन नित्य कर,
जिस विधि सिमरा जाय।
कभी तो दीनदयाल जी,
बोलेंगे मुसकाय।।

और यदि तेरे द्वार से हमें उस समय तक भिक्षा नहीं मिलती जब तक हमारी त्रुटियाँ दूर नहीं हो जायेंगी, तो फिर चलो यही काम पहले कर दो, त्रुटियाँ दूर करनेवाला भी तू ही है। तूने ही तो वेद में कहा है कि कभी भीर आ बने तो मुझे पुकारो। अब तुझे पुकार रहे हैं। ले, तेरी पवित्र वाणी में अपनी टेर सुनाते हैं–

यदि दिवा यदि नक्तमेनाꣳसि चकृमा वयम्।
वायुर्मा तस्मादेनसो विश्वान्मुञ्चत्वꣳहसः।।

यजु. 20.15

"जो दिन में, जो रात्रि में, अज्ञात अपराधों को हम लोग करें, उस समग्र अपराध और दुष्ट व्यसन से हमें वायु के समान पृथक् कर दे।"

यदि जाग्रद्यदि स्वप्नएनाꣳसि चकृमा वयम्।
सूर्यो मा तस्मादेनसो विश्वान्मुञ्चत्वꣳहसः।।

यजु. 20.16

"यदि जाग्रत अवस्था में और यदि सोते हुए मैं किसी पाप को करुँ अथवा करने की इच्छा रखूँ तो उस समग्र पाप और प्रमाद से सूर्य के समान मुझको मुक्त कर।"

यद् ग्रामे यदरण्ये यत्सभायां यदिन्द्रिये।
यच्छूद्रे यदर्ये यदेनश्चकृमा वयं
यदेकस्याधि धर्मणि तस्यावयजनमसि।।

यजु. 20.17

"हम लोग जो गाँव में, जो जंगल में, जो सभा में, जो मन में, जो शूद्र में, जो स्वामी या वैश्य में, जो एक के ऊपर धर्म में तथा जो अन्य अपराध करते हैं अथवा करनेवाले हैं, उन सबसे मुक्ति के साधन आप ही हैं।"

यन्मे छिद्रं चक्षुषो हृदयस्य मनसो
वातितृष्णं बृहस्पतिर्मे तद्दधातु।
शं नो भवतु भुवनस्य यस्पतिः।

यजु. 36.2

"जो मेरे नेत्र की वा अन्तःकरण की न्यूनता वा मन की व्याकुलता है, उसको बृहस्पति परमेश्वर मेरे लिए पूर्ण करे। जो सब संसार का रक्षक है, वह हमारे लिए कल्याणकारी होवे।"

कहो, अब तो मेरी पुकार सुनोगे न ! तेरे ही वेद के अन्दर, तूने ही अपने जिम्मे जो कर्त्तव्य लिया है, उसी की याद तुझे दिला रहा हूँ। हम पाप से सर्वथा पृथक् रहना चाहते हैं, परन्तु ये फिर भी हो जाते हैं। अतएव तेरे सम्बन्धी जितने पाप होनेवाले हैं या जिनकी सम्भावना है उससे तो हमें अलग कर दे और हमारे मन में जो गड्ढे पड़ गये हैं, भगवन्, तू ही उन्हें भरने में समर्थ है। भर उन्हें, कर दे दूर त्रुटियाँ और एक बार ऐसी दृष्टि दे दे जो तुझे ही देखती रहे, हाँ, तुझे ही !

क्रमशः

चित्तू पांडेय

चित्तू पांडेय का जन्म उत्तर प्रदेश में बलिया जिले के रत्तूचक गाँव में वर्ष 1865 में हुआ था। वे बचपन से ही ब्रिटिशों से नफरत करते थे, पर उनकी राजनैतिक विचारधारा ने ठोस आकार तब लिया, जब 1925 में गांधी जी बलिया आए और एक सभा को संबोधित किया था। गांधी से प्रभावित चित्तू पांडेय कांग्रेसी हो गए और अपना पूरा जीवन आज़ादी के आंदोलन के लिए समर्पित कर दिया। उन्होंने भारत छोड़ो आंदोलन में बड़ी भूमिका निभाई। नौ अगस्त, 1942 को कांग्रेस नेताओं की गिरफ्तारी की खबर बलिया पहुँचते ही अगले दिन सभी स्कूल बंद कर दिए गए और लोग सड़कों पर उतर गए। चित्तू पांडेय समेत दूसरे नेता गिरफ्तार हो गए थे। जिले के हर प्रमुख स्थान पर प्रदर्शन और हड़ताल शुरु हो गई। पांडेयपुर गाँव के क्रांतिकारियों की एक गुप्त मंत्रणा हुई, जिसमें प्रमुख स्थानों पर कब्जा कर 19 अगस्त को बलिया को अंग्रेजों से मुक्त कराने का फैसला लिया गया। तय योजना के अनुसार, लोगों ने अंग्रेज़ी सत्ता के सभी प्रतीकों, जैसे–बेल्थरा रोड रेलवे स्टेशन, डाकघर और विदेशी कपड़ों की दुकानों पर हमला बोला। क्रांतिकारियों ने मालगाड़ी लूट ली और बाँसडीह स्थित तहसील मुख्यालय पर भी कब्जा कर लिया। वहाँ से भीड़ बैरिया थाने पर पहुँची। रात में पुलिस की मौज़ूदगी में फिर ब्रिटिश ध्वज फहरा दिया। अगले दिन थाने पर तिरंगा फहराने की कोशिश में सत्रह क्रांतिकारियों को जान गँवानी पड़ी। इससे क्रांतिकारियों में गुस्सा इतना बढ़ा कि जिला मुख्यालय पर क्रांति की ज्वाला धधक उठी। स्थिति को नियंत्रण से बाहर जाते देख प्रशासन ने जेल में बंद चित्तू पांडेय से बात की। 19 अगस्त को चित्तू पांडेय और उनके समर्थकों को अंग्रेजों को तब जेल से रिहा करना पड़ा, क्योंकि उन्हें पता चला कि अपने नेता को छुड़ाने के लिए हजारों हथियारबंद लोग जेल की ओर बढ़ रहे हैं। प्रशासन को यह आश्वासन भी देना पड़ा कि वह किसी के खिलाफ़ कारवाई नहीं करेगा। लेकिन अगले ही दिन जब पुलिस ने अंधाधुंध गोलीबारी शुरु की, तो लोगों ने अंग्रेज़ी शासन से स्वतंत्रता की घोषणा की और चित्तू पांडेय को अपना प्रमुख घोषित किया। बलिया में एक समानांतर राष्ट्रीय सरकार गठित हुई, जिसने दस में से सात पुलिस थानों पर अधिकार जमा लिया और कलेक्टर को सत्ता त्यागने तथा सभी गिरफ्तार कांग्रेसियों को रिहा करने के लिए मज़बूर किया। नागरिक प्रशासन चलाने के लिए अलग–अलग इलाकों के लिए अलग–अलग पंचायतों की स्थापना की गई। कांग्रेस कार्यकर्ताओं को शहर की रक्षा के लिए नियुक्त किया गया। लेकिन क्रांतिकारियों की वह राष्ट्रीय सरकार कुछ ही दिन तक बनी रह सकी। 22–23 अगस्त की मध्य रात्रि को सेना ने बलिया में प्रवेश किया और जनता की सरकार को उखाड़ फेंका। उसी के साथ अंग्रेज़ों का भीषण दमन चक्र शुरु हुआ। हालांकि चित्तू पांडेय के बारे में कहा जाता है कि वह भाग निकलने में सफल रहे। चित्तू पांडेय ने खुद को गांधीवादी ही कहा, लेकिन बलिया में भारत छोड़ो आंदोलन की सफलता को देखकर पंडित जवाहरलाल नेहरु और सुभाष चंद्र बोस ने चित्तू पांडेय को बलिया के शेर की उपाधि दी थी। अलबत्ता यह विडंबना ही है कि आज़ादी से पहले बलिया को ब्रिटिशों से आज़ाद कराने में बड़ी भूमिका निभाने वाले चित्तू पांडेय आज़ाद भारत का सूरज नहीं देख पाए। छह दिसंबर, 1946 को उन्होंने आखिरी साँस ली। बलिया शहर के चौराहे का नाम उनके नाम पर रखा गया है।

स्वामी गुरुकुलानन्द 'कच्चाहारी'
पिथौरागढ़ (उत्तराखण्ड)
'इतिहास के बिखरे पन्ने' से साभार

गतांक से आगे...

पदवाक्यप्रमाणज्ञ श्री पं. ब्रह्मदत्त जिज्ञासु

● डॉ. ज्वलन्त कुमार शास्त्री

डॉ. ज्वलन्त कुमार शास्त्री द्वारा लिखित यह लेख धारावाहिक रूप में प्रकाशित किया जा रहा है। योजनानुसार प्रकाशित हो जाने पर एक ट्रैक्ट के रूप में प्रकाशित किया जायेगा। – सम्पादक

पं. ब्रह्मदत्त जी के साथ हमेशा पाँच से दस छात्र रहते थे जिन्हें वे आर्ष पद्धति से अष्टाध्यायी, काशिका आदि ग्रन्थ पढ़ाते थे। इसी क्रम में ब्रह्मचारी युधिष्ठिर (जो आगे चलकर महावैयाकरण पं. युधिष्ठिर मीमांसक के नाम से प्रसिद्ध हुए) को उनके पिताश्री गौरीलाल आचार्य ने 3 सितम्बर 1921 ई. को साधु आश्रम हरदुआगंज में प्रवेश करा दिया था। अन्य विद्यार्थी भी प्रविष्ट हुए जो आगे चलकर प्रख्यात आर्य विद्वान् और गुरुकुलों के आचार्य हुए। यह आश्रम जनवरी 1926 में काशी में स्थानान्तरित हो गया, साथ में 9 (नौ) छात्र थे तथा सहयोगी पं. शंकरदेव जी। काशी में संचालित कई अन्नक्षेत्र थे, जहाँ संस्कृत के विद्यार्थियों के लिए निःशुल्क भोजन की व्यवस्था होती थी। इन्हीं में से एक–दो अन्नक्षेत्रों में विद्यार्थियों तथा गुरुजनों की व्यवस्था हुई। एक धनी पंजाबी सज्जन जिनका जरी की साड़ियों का व्यवसाय था, उनसे कुछ धनादि की नियमित व्यवस्था होती थी। इसके आगे गुरुजी (पं. ब्रह्मदत्त जी) के जीवन का संक्षिप्त विवरण उन्हीं की 'स्वलिखित जीवन परिचय' से हम उद्धृत करते हैं–

"दूसरी बार शुद्धि का कार्य 1926 ई. से 1928 ई. तक स्वामी श्रद्धानन्द जी के बलिदान पर पूज्य गुरुवर तिवारी जी की प्रेरणा एवं माननीय पं. मदनमोहन मालवीय जी की 500 रूपये मासिक की सहायता से काशी के पण्डितों एवं संन्यासियों की अन्तरंग सभा द्वारा काशी हिन्दू शुद्धि सभा के मंत्री रूप में पं. केदारनाथ सारस्वत, स्वामी रामानन्द, म.म. पं. देवीप्रसाद जी कवि चक्रवर्ती आदि के सहयोग से कार्य किया, जबकि पं. गोपाल शास्त्री जी जेल में थे। इन सब में तथा आगे काशी में आचार्य श्री पं. शंकरदेव जी मेरे साथी रहे। काशी में पहली बार हम लोग कुछ छात्रों सहित जनवरी 1926 ई. से अप्रैल 1928 ई. तक रहे। क्षेत्रों में भोजन करते हुए अपने छात्रों को भोलाशाह के बगीचे (करणघण्टा) में पढ़ाते थे, और स्वयं व्याकरण के सूर्य श्री पं. देवनारायण तिवारी जी से सम्पूर्ण महाभाष्यादि पढ़ते रहे। श्री पं. ढुण्ढिराज जी शास्त्री, पं. गिरीश जी शुक्ल तथा गोस्वामी दामोदर लालजी से प्राचीन दर्शनों का पूरा अध्ययन किया। सन् 1928 से 1931 ई. तक रामभवन अमृतसर में युधिष्ठिर आदि छात्रों को सम्पूर्ण महाभाष्य तथा निरुक्तादि पढ़ाता रहा। वैदिक वाङ्मय तथा प्राचीन इतिहास के मर्मज्ञ पं. भगवद्दत्तजी से रिसर्च का ज्ञान प्राप्त हुआ।

सन् 1931 में महात्मा हंसराजजी की विशेष प्रेरणा से उनके सभापतित्व में पं. विश्वबन्धु शास्त्री एम.ए., पं. राजाराम शास्त्री तथा पं. चारुदेव शास्त्री जी से 'निरुक्त और वेद से इतिहास' विषय पर लाहौर में 5 दिन शास्त्रार्थ किया। जिनमें समाधान पक्ष में मुख्य नाम ब्रह्मदत्त जिज्ञासु का था। **{निरुक्तकार यास्क श्वेद में इतिहास मानते थे या नहींश विषय पर आर्यसमाज के दिग्गज विद्वानों का शास्त्रार्थ, प्रथम संस्करण 1975 ई., द्वितीय संस्करण 1994 ई., प्रकाशक– रामलाल कपूर ट्रस्ट, बहालगढ़ (सोनीपत–हरयाणा)}** दुबारा काशी में सन् 1931 से 35 तक शीतला घाट पर 'विरजानन्द आश्रम' राजमन्दिर में पूर्ववत् छात्रों को महाभाष्यादि पढ़ाते हुए स्वयं भारत में अद्वितीय मीमांसक श्री चिन्नस्वामी शास्त्रीजी तथा उनके शिष्य पं. पट्टाभिराम शास्त्री द्वारा सम्पूर्ण मीमांसा के सब ग्रन्थ, महान् वैदिक विद्वान् पं. रामभट्ट रटाटेजी से श्रौत तथा अन्य विद्वानों से शेष सब दर्शन तथा साहित्य में मूल ग्रन्थों तथा वाक्यपदीय आदि का अध्ययन अनेक विद्वानों से काशी में किया। भर्तृहरिकृत महाभाष्य की टीका छपनी आरम्भ हुई, उसका सम्पादन किया।

सन् 1936 से सन् 1947 तक रावी तट शाहदरा, लाहौर, विरजानन्द आश्रम में छात्रों को अष्टाध्यायी, महाभाष्य, निरुक्त, दर्शन तथा वेद के अध्यापन के साथ–साथ ब्राह्मणग्रन्थों का विशेष अनुशीलन, यजुर्वेदभाष्यविवरण प्रथम भाग की तैयारी तथा छपना, परोपकारिणी सभा अजमेर सम्बन्धी अनेक कार्य करता रहा। इसी समय में देवतावाद विषय पर पं. श्रीपाद दामोदर सातवलेकरजी के साथ कई मास तक लिखित शास्त्रार्थ हुआ। रामलाल कपूर ट्रस्ट द्वारा विविध प्रकाशन कार्य हुआ। हैदराबाद सत्याग्रह में हमारे छात्र गये थे, कई मास तक आश्रम बन्द रहा। मार्च 1947 से 23 अगस्त 1947 तक, जबकि 'हिन्दू' लाहौर समाप्त हो चुका था, हम सब रावी तट पर ही रहे। अन्त में हिन्दू सैनिकों द्वारा ट्रकों में भर कर लाहौर कैम्प में लाये गये, और 28 अगस्त 1947 को दैवयोग से बचकर अमृतसर पहुँचे। 50–60 मन पुस्तकें, जिनमें सैकड़ों हस्तलेख भी थे, वे सब जला दिये गये। लगभग 90 मन पुस्तकें हम लोग ले आये थे। **{गुरुजी (पं. ब्रह्मदत्त जी) द्वारा स्थापित 'पाणिनि महाविद्यालय वाराणसी' में लगभग 40 आलमारी (लगभग 18000) पुस्तकें (लाहौर पाकिस्तान में 50–60 मन नष्ट हो जाने पर भी) थीं, जिसमें अलम्य पुस्तकें भारी संख्या में हैं। गुरुजी के स्वर्गवास के अनन्तर उनका निजी पुस्तकालय भी 'रामलाल कपूर ट्रस्ट' के पुस्तकालय का अंग बन गया है।}**

सन् 1925 से 1928 ई. तक पहले काशी में रहे तथा सन् 1931 से 1935 तक दूसरी बार काशी में रहे। तीसरी बार 1947 से 22 फरवरी सन् 1963 ई. तक काशी मोतीझील में हैं, कल का पता नहीं। पाकिस्तान से निकलने को बाधित किये जाने पर अनेक स्थानों (गुरुकुल चित्तौड़गढ़, सरस्वती भवन अजमेर आदि) में 'केवल पाँच वर्ष के लिये' स्थान माँगने पर भी सहयोग न मिलने पर मार्च सन् 1950 में पूरी तरह काशी में डेरा डाला। अक्टूबर सन् 1947 से फरवरी 1950 तक शुद्धि आदि कार्यों में समय लगाया। अन्त में मार्च 1950 में मोतीझील काशी में डेरा डाला गया कि जब तक अन्यत्र कोई स्थायी प्रबन्ध न हो, यहीं रहा जावे। यहाँ अष्टाध्यायी–महाभाष्य–निरुक्त–मीमांसा–श्रौत–ब्राह्मण–वेदादि का अध्ययन अध्यापन 'विरजानन्द आश्रम' के रूप में 50) रू. मासिक किराये के मकान में चलता रहा।

तत्पश्चात् अगस्त 1953 से 'पाणिनि महाविद्यालय' के रूप में पूर्ववत् चल रहा है, जिसमें भारत के प्रायः सभी प्रान्तों से संस्कृत के एम.ए., व्याकरणाचार्य, साहित्याचार्य, शास्त्री, बी.ए., मैट्रिकादि, डाक्टरेट तथा व्यापारी आदि बहुत संख्या में शिविरों में तथा विद्यालय में पढ़ते रहे तथा इस समय भी पढ़ते हैं। जिनमें कोरिया–अमेरिकादि विदेशी छात्रों के अतिरिक्त मुसलमान आदि भी आकर निःशुल्क संस्कृत पढ़ते रहते हैं। जाति वा आयु का कोई प्रतिबन्ध नहीं।

इस समय कई प्रौढ़ पठनार्थी बिना रटे अष्टाध्यायी पद्धति से संस्कृत तथा उसके व्याकरण का ज्ञान कर रहे हैं। कम से कम 40 दिन व 6 मास में गीता–रामायणादि समझने वा साहित्य, दर्शनादि पढ़ने का सामर्थ्य हो जाता है। **द्वादशसु वर्षेषु व्याकरणं श्रूयते** (12 वर्ष में व्याकरण होता है) के स्थान में **चतुर्षु वर्षेषु व्याकरणं श्रूयते** (4 वर्ष में व्याकरण पूरा होता है) कराया जाता है। काशी के प्रमुख विद्वान् म. म. पं. गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी आदि विद्वान् अष्टाध्यायीपद्धति पर मुग्ध हैं। काशी के विद्वान् चकित हैं और कहते हैं कि जिज्ञासुजी ने कोई देवी सिद्ध की हुई है। वह देवी अष्टाध्यायी ही तो है। साथ में महाभाष्य–निरुक्त–श्रौत–मीमांसा दर्शनादि के पाठ भी चलते रहते हैं।

व्यक्ति नहीं संस्था

संस्कृताध्ययन तथा वैदिक वाङ्मय के संरक्षण तथा संवर्द्धन के लिए पं. ब्रह्मदत्त जिज्ञासु जी की सबसे बड़ी देन यह है कि उन्होंने अपने जीवन में ऐसे पचासों विद्वान् शिष्य तैयार किये और उनमें यह भावना भरी कि संस्कृताध्ययन के लिए ऋषि दयानन्द प्रदर्शित आर्ष पद्धति की पाठशाला या गुरुकुल निरन्तर संचालित होने चाहिएँ। साथ ही व्याकरणादि वेदांगों तथा वैदिक वाङ्मय के संवर्द्धन में समर्पित विद्वानों की एक पीढ़ी तैयार की। उनके द्वारा प्रारब्ध यह परम्परा अद्यावधि सुष्ठु रीत्या प्रचलित है। आज देश में या कुछ अंशों में विदेश में भी अष्टाध्यायी–क्रम से संस्कृत पठन–पाठन के बालकों वा बालिकाओं के जो गुरुकुल या विद्यालय चल रहे हैं उनका संचालन पूजनीय गुरुजी (पं. ब्रह्मदत्त जिज्ञासु) के शिष्यों–प्रशिष्यों द्वारा ही किया जा रहा है। जैसे पाणिनि महाविद्यालय रेवली, (सोनीपत–हरियाणा), निगम–नीडम्, तेलंगाना, कन्या पाणिनि महाविद्यालय, वाराणसी, आर्ष कन्या गुरुकुल, नजीबाबाद, आर्ष कन्या गुरुकुल शिवगंज–सिरोही (राजस्थान), आर्ष गुरुकुल, एटा आदि। गुरुजी द्वारा संस्थापित 'विरजानन्द आश्रम' की शताब्दी (1921–2021 ई.) भी मनाई जा चुकी है।

क्रमशः

अध्यापक आवास, स्टेशन रोड, अमेठी (उ.प्र.)–227405

जैसा मैंने दयानन्द को देखा

● पं. नथमल तिवाड़ी

जब मैं करीब 17 वर्ष का था स्थानीय नरसिंह जी के मन्दिर में रात्रि के समय में पुराण की कथा हुआ करती थी। मुझे बड़ी रोचक मालूम हुआ करती थी। साँपों की कथा रुचिकर होती थी। उन्हीं दिनों में स्वामी जी के व्याख्यान सेठ गजमल जी की हवेली में हुआ करते थे। एक दिन मैं भी व्याख्यान सुनने गया, उसी दिन **"पुराणों के गपोड़ों"** पर व्याख्यान हुआ। मुझ पर बड़ा असर हुआ। जब मैं दूसरे दिन मन्दिर में गया, व्यास जी से जब शंका करने लगा तो उन्होंने मेरे पिता जी से शिकायत की–

"एक संन्यासी ईसाई धर्म के प्रचार के लिये यहाँ आया हुआ है, वह ईसाइयों का नौकर है। तुम्हारा पुत्र उसका भाषण सुनकर नास्तिकता की बातें करता है कहीं ऐसा न हो कि उसके बहकावे में आकर वह धर्मभ्रष्ट हो जाए। इसलिये अपने पुत्र को उस का व्याख्यान सुनने मत जाने दिया करो।"

व्यास जी के कथन का असर पिता जी पर पड़ गया। उन्होंने मुझे मना किया कि तुम व्याख्यान में मत जाया करो और पण्डितों से समझाने की चेष्टा की परन्तु मेरी अकाट्य युक्ति से उन्हें भी स्वीकार करना पड़ा कि यह जो कुछ कहता है सब ठीक है।

मैं बराबर व्याख्यान में जाता रहा। वहाँ पर पादरी ग्रे साहब तथा मास्टर धन्नालाल जी से भी ईसाई और जैन धर्म पर चर्चा लिखित होती रही। अन्त में सूर्य के सामने जुगनू का प्रकाश कब ठहर सकता है। मुझे याद है कि लिखने वालों में पं. चन्दूलाल जी थे। अन्त में पादरी ग्रे साहब ने स्वामी जी से कहा कि आप मेरे बंगले पर आवें वहाँ पर वार्तालाप करेंगे।

एक बार एक स्थान से हम लोग पुस्तकें लेकर स्वामी जी के साथ व्याख्यान के लिये पैदल आ रहे थे, स्वामी जी अतीव वेग से चलते थे हमें उनके साथ भागना पड़ता था।

एक बार पाण्डेय श्यामसुन्दर जी ने मेरी शिकायत स्वामी जी से की कि महाराज ! मेरे घर के पास जैन मन्दिर में एक जैन पण्डित रहता है यह लड़का उसके साथ बुरी तरह से असभ्य शब्दों में बहस कर रहा था कि " अगर तुम्हारे ठाकुर जी सच्चे हैं तो हम उन पर पेशाब कर देते हैं तो वे हमारा क्या कर सकते हैं।" इत्यादि बहस करके उन्हें तंग करता रहता है। जब मैं स्वामी जी के पास गया तो उन्होंने फरमाया कि तेरी शिकायत आई है। सो मीठे शब्दों में बातचीत करना **"सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयात्"** कह कर मुझे समझाया।

मैं और मेरे मित्र पं. मातादीन जी मिश्र और मेरे बहनोई पं. प्रभूलाल जी व्यास नित्य स्वामी जी के पास जाया करते थे। रात्रि को 10 बजे तक बराबर सत्संग लोगों से होता रहता था, हम लोग भी सुना करते थे। एक दिन स्वामी जी के लिए हम लोग आगरे दर्वाजे पर खरबूजे ले रहे थे। उस समय काशी के एक विद्वान् ने हम से पूछा कि लड़को ! तुम बता सकते हो कि एक दयानन्द नाम का साधु यहाँ पर कहाँ ठहरा है ? हम ने कहा कि हम लोग वहीं जा रहे हैं चलिये। रास्ते में पण्डित ने कहा कि मैं 40 वर्ष तक काशी में पढ़ा हूँ, मैं उसका मानभंग करुँगा। वह लोगों को बहका कर धर्मविमुख करता है, इत्यादि बहुत सी बातें उसने हम से कहीं। मैंने वेद शास्त्रों का अध्ययन किया है इस प्रकार बार–बार उसने कहा। जब स्वामी जी के पास पहुँचे, स्वामी जी आरामकुर्सी पर लेटे हुए थे। जाते ही स्वामी जी से उसने नमस्कार की और स्वामी जी ने उसे बैठने को कहा। वह तो एकदम धाराप्रवाह संस्कृत में बोलने लगा। श्री स्वामी जी हँसते रहे। जब वह बोल चुका तब श्रीमुख से जो–जो शंकाएँ उसके हृदय में थीं और करना चाहते थे एक–एक को कहने लगे। अमुक शंका है तो यह उत्तर है इस प्रकार सारी शंकाओं का उत्तर पहले से ही सुनाया और कहने लगे इनके अतिरिक्त प्रश्न हो तो कहो उत्तर दिया जावेगा। अपने प्रश्नों का इस प्रकार उत्तर सुनकर पण्डित जी ने अपना साफा स्वामी जी के चरणों में रख कर क्षमा माँगी और कहा कि आप तो योगी और अन्तर्यामी हैं। मैं तो आया था विजय प्राप्त करने को परन्तु मेरा अभिमान चूर–चूर हो गया। स्वामी जी ने कहा–नहीं, विद्वानों में ऐसा वार्तालाप हुआ ही करता है और स्वामी जी ने पण्डित जी की विद्या की, योग्यता की प्रशंसा की।

अजमेर आर्यसमाज की स्थापना श्री स्वामी जी के कर कमलों द्वारा हुई थी। स्थान कल्याणमल जी की कोठी थी। उस समय समाज के प्रधान बाबू हरनामसिंह जी ओवरसीयर, मन्त्री–पण्डित सुखेदवप्रसाद जी, हैड पण्डित नार्मल स्कूल, उपमन्त्री बा. मुन्नालाल जी उप्रैती ड्राफ्ट्समैन, कोषाध्यक्ष–पं. कमलनयन जी, पुस्तकाध्यक्ष–बाबू बनवारीलाल जी, क्लर्क लोकोशॉप, सभासद्–पं. प्रभुलाल जी व्यास, पं. मातादीन जी मिश्र, बाबू लालचन्द जी हैड क्लर्क पुलिस दफ्तर, पं. चन्द्रिकाप्रसाद जी लेट चीफ क्लर्क कैरेज दफ्तर, बा. जेठमल जी इंजिनीयरिंग क्लर्क, पं. नाथूलाल जी ड्राफ्ट्समैन, बा. पद्मचन्द्र जी जेठमल जी सोढा, पाण्डेय श्यामसुन्दर जी, बलदेवप्रसाद जी वाजपेयी, पं. भोलानाथ जी आदि–आदि थे। मैं पूरा 18 वर्ष का नहीं था इसलिये मेरा नाम सभासदों में नहीं लिखा गया। मैंने चन्दा इकट्ठा करने की सेवा स्वयं स्वीकार की। पीछे कुछ महीनों के बाद सभासदों की सूची में मेरा नाम लिखा गया। स्वामी जी के व्याख्यान जो शहर में होते थे वे पं. भागराम जी द्वारा होते थे।

एक दिन स्वामी जी के पास कचहरी से आते हुए पं. भागराम जी कोठी पर आये। हम कई एक वहाँ पर बैठे हुए थे। स्वामी जी से पण्डित जी ने कहा–महाराज ! कुछ एकान्त में बातचीत करना चाहता हूँ। उसी समय स्वामी जी ने उत्तर दिया कि पण्डित जी ! यहाँ रण्डी, रिश्वत, राजद्रोह आदि का स्थान तो है नहीं। धर्म के विषय की बात है तो सब के सामने ही कहिये जिससे सब लोगों को लाभ होवे। मैं कोई गुप्त बात नहीं करता या किसी के कहने से किसी सम्प्रदाय का पक्ष भी नहीं लेता। सत्यशास्त्रों के विषय में आम तौर से उपदेश व शंकासमाधान करता हूँ। यह सुनकर पण्डित जी चुप हो गये। कचहरी से आते हुए सदैव स्वामी जी के पास आया करते थे।

स्वामी जी नित्य प्रति स्नान करने के पीछे दिन में दो या तीन बार गाजनी (मुलतानी) मिट्टी का सारे शरीर में लेपन अच्छी तरह से किया करते थे।

स्वामी जी प्रातः काल एक सेर दूध पीकर काम पर बैठते थे। भोजन मध्याह्न के समय एक बार करते थे। रघुनाथ उपाध्याय एक नामी रसोइया को मैंने लाकर स्वामी जी के पास रक्खा था। उसकी बड़ी प्रशंसा करते थे कि भोजन के पदार्थ ऐसे उत्तम बनाता है कि अधिक खाने में आ जाता है।

एक दिन स्वामी जी ने व्याख्यान में यह समाचार सुने कि शहर के बाहर गंज मुहल्ले में भरतपुरिये चमारों के घर जो फूस के थे सब के सब जल गये। फौरन ही उनके खाने–पीने के लिए पहले अपील की और तुरन्त चन्दा कराया। उसी समय भोजन के लिए चने और पूरियों का प्रबन्ध हो गया। पीछे व्याख्यान प्रारम्भ किया।

एक दिन मैंने महाराज से पूछा कि मैं संस्कृत पढ़ना चाहता हूँ। क्या शुरु करुँ ? उन्होंने फरमाया कि पहले सन्धिविषय और वर्णोच्चारण शिक्षा पढ़ो। जिनकी एक–एक कापी उन्होंने कर कमलों द्वारा प्रदान की जिन्हें मैंने महाराज की प्रसादी समझ कर अपने पास सुरक्षित रख छोड़ा है।

मसूदे को प्रस्थान

मैं अकेला कभी–कभी दोपहर के समय भी स्वामी जी के पास चला जाया करता था। मसूदा जाने के सम्बन्ध में स्वामी जी पण्डित छगनलाल जी कामदार मसूदे से भी पत्र–व्यवहार करते थे। अन्त में स्वामी जी का मसूदे जाना निश्चित हो गया। स्वामी जी को लेने के लिए वहाँ से प्रतिष्ठित लोग आये और वे वहाँ पर पधार गये। मुझे बड़ा असह्य मालूम हुआ। मैं भी पण्डित छगनलाल जी के साथ चला गया और एक मास तक वहीं पर रहा, बीच में मेरे मित्र जेठमल जी सोढ़ा भी आये। ये स्वामी जी से यज्ञोपवीत लेने आये थे। हवन सामग्री अपने साथ ही लाये थे। स्वामी जी ने हवन कराकर गुरुमन्त्र का उपदेश देकर कृत्य समाप्त किया और आज्ञा की कि नित्य प्रति सन्ध्या आदि पञ्चकर्म नियमानुसार नित्य किया करो।

एक दिन मैं और जेठमल जी सोढ़ा जल्दी से उठे और स्वामी जी के साथ घूमने को गये। स्वामी जी इतने वेग से चले कि हम दोनों दो मील तक तो भागते हुए चलते रहे अन्त में रास्ते में ही ठहर गये और वापस आ गये। उन्हीं दिनों में स्वामी जी के घूमने जाने के समय एक जैनी साधु भी शौचादि के लिए जंगल में जाया करते थे उनसे भी बातें हुईं और शास्त्रार्थ की ठहरी। जैन अनुयायियों ने भी चाहा कि धर्म के विषय में शास्त्रार्थ हो। बड़ी गरम खबर उड़ाई परन्तु कुछ न हुआ। मैं दिन भर स्वामी जी के पास बैठा रहता था, उन दिनों में वेदभाष्य करते थे। साथ में तीन या चार पण्डित थे। पं. यमुनादत्त जी शास्त्री पुष्कर वाले, पं. भीमसेन जी, ब्रह्मचारी रामानन्द जी और एक विद्वान् उनका नाम शायद पं. ज्वालाप्रसाद जी होगा। ये सब नित्य कर्म से निवृत्त होकर काम पर बैठ जाते थे। स्वामी जी मन्त्रों का अर्थ संस्कृत में करते थे पण्डित लोग भाषा में करते थे। 11 बजे काम की छुट्टी होती थी। भोजन व विश्राम के पश्चात् पुनः दो बजे से पाँच

शेष पृष्ठ 09 पर ☞

मानव-निर्माण में वैदिक मूल्यों का समावेशः एक विवेचन

● प्रो. धर्मेन्द्र कुमार

मानव–जीवन में शिक्षा का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। विद्या को प्राप्त किए बिना मनुष्य, मनुष्य नहीं बनता। वैदिक संस्कृति में **'द्विज'** कहते ही उसे हैं, जिसका दोबारा जन्म होता है। एक माता–पिता से, दूसरा आचार्य कुल में **"शरीरमेव मातापितरौ जनयतः स हि विद्यातः तं जनयति। तच्छ्रेष्ठं जन्म।"** (आप. ध. सूत्र 1.1.1.16–17) माता–पिता तो शारीरिक जन्म देते हैं, किन्तु आचार्य–कुल में जाकर ही द्विज बनता है। अतः शिक्षा मानव मात्र के सर्वांगीण विकास के लिए अमोघ साधन है। आज शिक्षा का अर्थ साक्षरता अथवा मात्र जीविकोपार्जन रह गया है। वस्तुतः जीविकोपार्जन शिक्षा का उद्देश्य अवश्य होना चाहिए, इसका निषेध नहीं किया जा सकता, किन्तु अन्तिम लक्ष्य यह नहीं हो सकता।

प्रश्न है कि क्या साक्षरता मात्र मानव को शिक्षित होने का प्रमाण पत्र दे सकती है, क्या साक्षर होकर भौतिकता से युक्त डॉक्टर, इंजीनियर, वकील, अध्यापक, राजनेता या व्यवसायी बनाकर शिक्षा के कारखाने से शिक्षित मानव को एकमात्र लक्ष्य रोटी–रोजी और मकान देकर सुख एवं शान्ति की प्राप्ति करा सकते हैं। यद्यपि मानव की ये भौतिक आवश्यकताएँ अनिवार्य हैं, फिर भी मानव की तृप्ति मात्र इन्हीं से नहीं, इनके अतिरिक्त वह शान्ति और मुक्ति चाहता है।

स्पष्ट है कि वर्तमान शिक्षा–व्यवस्था से यदि मानव–कल्याण हो जाता, तो समाज में व्याप्त अशान्ति, भ्रष्टाचार, चोरी, डकैती, हिंसा, युद्ध की विभीषिका, आतंक या विकृत संस्कृति का प्रचार–प्रसार न हो पाता और न मानव पीड़ित होता। इसके विपरीत अभी भी मानव में इससे मुक्त होने की तीव्र उत्कण्ठा और प्रयत्न परिलक्षित हो रहे हैं। शांतियुक्त, भ्रष्टाचारविहीन समाज की संरचना के प्रति मानव–समाज आशान्वित एवं प्रयत्नशील है।

वैदिक संस्कृति के आधारभूत वे मूल्य जिन पर समग्र संस्कृति आधारित है, मानवमात्र के कल्याण को लक्ष्य कर इसके समाधान स्वरूप कहती है **'सा विद्या या विमुक्तये।'** अर्थात् विद्या वह है जो हमें सब प्रकार के दुःखों से विमुक्ति दिलाए। वर्तमान शिक्षा प्रणाली में भौतिक विकास एवं उन्नति चरम सीमा पर पहुँच रही है। यह अनिवार्य भी है, किन्तु मानव केवल शरीर नहीं अपितु आत्मा तथा अन्य मनादि उपकरणों से युक्त एक अद्भुत रचना है। जीवन की गाड़ी एक ही पहिये से नहीं चल सकती अतः मानव की सर्वांगीण उन्नति आध्यात्मिक एवं भौतिक दोनों साधनों पर निर्भर है। यदि इसे हम विकृत कर देंगे तो समाज की विकृति अवश्यम्भावी है।

अतः यदि मानव सही रूप में शिक्षित होना चाहता है तो उसे वैदिक मूल्यों पर अवश्य ध्यान देना होगा। शिक्षा में वैदिक मूल्यों द्वारा ही समाज में एकरूपता तथा समरूपता निश्चितरूपेण आ सकती है। वर्तमान शिक्षा पद्धति में हमें उन प्राचीन आदर्श भूत मूल्यों की ओर अवश्य ध्यान देना चाहिए।

वैदिक शिक्षा–पद्धति का उद्देश्य मनुष्य को केवल त्यागवादी ही बनाना नहीं है, अपितु बालक का सर्वांगीण विकास करना भी है। शारीरिक, आत्मिक एवं सामाजिक उन्नति करना ही शिक्षा का मुख्य उद्देश्य होना चाहिए। अथर्ववेद का प्रारम्भ ही वैदिक शिक्षा के उद्देश्य के साथ होता है– **'पुनरेहि वाचस्पते देवेन मनसा सह। वसोष्पते निरमय मय्येवास्तु मयि श्रुतम्।।'** गुरु–शिष्य का सम्बन्ध, शिक्षक एवं शिक्षार्थी, दोनों के कर्त्तव्य इस मंत्र में बताये गये हैं। गुरु ऐसे पढ़ायें जिससे शिष्य आनन्द के साथ पढ़ते जायें। दो गुण आचार्य के होने चाहिएँ–एक गुण वाणी का प्रयोग करने में निपुण या समर्थ, शिष्य को विषयज्ञान कराने में उत्तम निपुण हो और दूसरा कि वह गुण **(वसोष्पतिः)** अर्थात् शब्दों द्वारा (Theoretical) ज्ञान के साथ–साथ उसको वस्तुओं द्वारा (Practical) साक्षात् प्रत्यक्ष करा देने में समर्थ होना चाहिए। शिष्य इस प्रकार के होने चाहिएँ कि वे उस ज्ञान को प्राप्त करके स्थिर करने की उनमें तीव्र उत्कंठा हो। हर एक विद्यार्थी को अपने मन में यह इच्छा रखनी चाहिए कि 'हम सब ज्ञान से युक्त हों', ज्ञान की वृद्धि करते रहें और कभी ज्ञान की प्रगति में बाधा न डालें, ज्ञान का विरोध न करें और न कभी मिथ्या ज्ञान का प्रचार करें। ज्ञान की वृद्धि के उपाय स्वयं वेद ने बताए हैं। सबसे पहला साधन है–**'विद्या'**–जिनसे सभ्य समाज बनता है, उन मूल तत्वों का ज्ञान प्राप्त करना और उनका अपनी उन्नति से सम्बन्ध देखना तथा उसका अनुष्ठान करने की विधि जानना–यही सीखने योग्य विद्या है।

दूसरा साधन ज्ञानवृद्धि का **आचार्य** है। उत्तमोत्तम विद्याओं को सिखाने वाला, जिसको मंत्र में **'वाचस्पतिः'** कहा है। उत्तम रीति से विद्या पढ़ाने वाला **'वसोष्पतिः'** अग्न्यादि मूलतत्वों का प्रयोग यथावत् करने वाला हो, 'पति' शब्द 'प्रभुत्व' (Mastership) का भाव बताता है। तीसरा साधन है **पढ़ाने की रीति।** गुरु अपने **(देवेन मनसा)** मन के शुभ संकल्प के साथ पढ़ावे **'निरामय'** बालकों को हँसते–मुस्कुराते हुए विषयों का ज्ञान कराता जाए। आनन्द के साथ पढ़ाए। शिष्यों के प्रश्नों का प्रेमपूर्वक उत्तर देकर उनका समाधान करे। ज्ञान के क्षेत्र में चौथा साधन है **'शिष्य'**। उसे सदा ज्ञानवान् बनने का पूरा–पूरा प्रत्यत्न करना चाहिए। पढ़ा हुआ ज्ञान आत्मसात् करे, इस ज्ञान का कदापि विरोध न करे। ज्ञान का सदुपयोग हो, जिससे समाज से व राष्ट्र से अज्ञान समाप्त हो जाए।

वस्तुतः नैतिक मूल्यों के द्वारा ही हम समाज में एकरूपता और एकरसता ला सकते हैं। कुछ मानवीय मूल्य ऐसे होते हैं, जिनका कदापि विरोध नहीं किया जा सकता है। वे मानवीय गुण प्रेम, दया, सहानुभूति, त्याग, सेवा, सहिष्णुता, परस्पर सहयोग भावना, उत्तमोत्तम आचरण, शिक्षा, विद्या, मनुर्भव, इत्यादि शुभ श्रेष्ठ गुणों द्वारा हो मनुष्य का सुनिर्माण सम्भव है तथा इसी के द्वारा समाज एवं राष्ट्र को भी मंगलमय बनाया जा सकता है।

शिक्षा का वैदिक आदर्श क्या है ? यदि इस बात को हम जान पाएँगे तो बहुत सा वाद–विवाद शान्त हो जाए। उपनिषत्कालीन महर्षियों ने 'शिक्षा कैसी होनी चाहिए' इस प्रश्न का समुचित उत्तर निम्न मंत्र में दिया है–

सहनाववतु सह नौ भुनक्तु
सहवीर्यं करवावहै।
तेजस्विनावधीतमस्तु मा विद्विषावहै।
(बृहदारण्यकोपनिषद्)

इस मंत्र को विद्याभ्यास के प्रारम्भ में दोनों गुरु–शिष्य बोलते हैं। **'नौ'** शब्द का अर्थ ही द्विवचन है अर्थात् गुरु और शिष्य। **अधीतम्** शब्द का अर्थ है–'विद्या स्वाध्याय' जो कुछ हम पढ़ते या पढ़ाते हैं।

मंत्र के अनुसार अध्ययन या अध्यापन का उद्देश्य गुरु और शिष्य को आत्मरक्षा करने में समर्थ होने चाहिए। भोजन के लिए पराश्रित न हों, समाज में वीरता के भाव की स्थापना करने वाले हों, उनका स्वाध्याय उन्हें तेजयुक्त और गौरवशाली बनाए, परस्पर द्वेष या प्रतिद्वन्द्विता के शिकार न हों अर्थात् गुरु के अन्दर अपने शिष्य के प्रति वही भावना होनी चाहिए जो एक पिता में अपने पुत्र के लिए होती है। प्रत्येक पिता चाहता है कि रूप, गुण, शौर्य, विद्या आदि में मेरा पुत्र मुझसे बढ़कर निकले इसीलिए शास्त्रकार कहते हैं– **'सर्वस्माज्जयमिच्छेत् पुत्रादिच्छेत् पराजयम्** अर्थात् सब से जय और पुत्र से पराजय, अन्य सबसे विजय की कामना करे, किन्तु पुत्र से पराजय की कामना करे। अपने पुत्र को गुणों में अपने से बढ़कर देखने की इच्छा जितनी स्वाभाविक है, उतनी ही सृष्टि के विकास के लिए आवश्यक भी है। इसी प्रकार गुरु के मन में सदा यह भावना रहनी चाहिए कि मेरा शिष्य विद्यादि गुणों में मुझसे भी बढ़कर निकले, तभी समाज को योग्यतर नागरिकों की उपलब्धि की परम्परा कायम रह सकती है।

जो शिक्षा छात्रों को आत्मरक्षा और शत्रुओं से देश–रक्षा के योग्य न बना सके, जो शिक्षा छात्रों की रोजी–रोटी की समस्या हल न कर सके, उन्हें श्रम से जी चुराना सिखाए, जो शिक्षा विजिगीषु समाज का निर्माण न कर सके, जो शिक्षा छात्रों को तेजस्वी बनाने के बजाए उनका तेज छीनकर उन्हें अकालवृद्ध बनने के लिए छोड़ दे और जो शिक्षा सारे समाज को ऐक्यबद्ध करने के बजाए राग–द्वेष में फँसाकर नाना वर्गों और नाना जातियों में बाँटकर विघटन की ओर प्रवृत्त करे, जो शिक्षा समाज को परस्पर जोड़ने के बजाए तोड़े, वह सही शिक्षा नहीं है।

इस प्रकार मंत्र के अनुसार शिक्षा के पाँच उद्देश्य हमारे सामने आते हैं। जिनमें से प्रथम है–**'सहनाववतु'** इसकी व्याख्या में ब्रह्मचर्य समाविष्ट है, क्योंकि बिना ब्रह्मचर्य के शरीर, मन, बुद्धि का समुचित विकास सम्भव नहीं है और उनके विकास के बिना आत्मरक्षा कैसे सम्भव है ? **'सह नौ भुनक्तु'**–आश्रम व्यवस्था का ही बोलबाला है–जहाँ जीवन की दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए नौकर–चाकरों का उपयोग न हो, अपितु गुरु और शिष्य स्वयं मिलकर अपने श्रम से भोजनाच्छादन की जरुरतें पूरी कर लेते हों। **'सहवीर्यं करवावहै'** उस स्थिति का संकेत करता है, जब राष्ट्र में कोई नागरिक कायर और दुर्बल न हो। **'तेजस्विनावधीतमस्तु'** इस बात को द्योतित करता है कि राष्ट्र के

शेष पृष्ठ 09 पर ☞

गतांक से आगे...

उत्पत्ति का विज्ञान क्या है?

● श्री हरिश्चन्द्र वर्मा 'वैदिक'

{श्री हरिश्चन्द्र वर्मा जी के अपनी अनन्त यात्रा पर चले जाने के बाद उनके सुपुत्र द्वारा वर्मा जी द्वारा लिखित लेखों की कुछ अप्रकाशित प्रतियाँ 'आर्यजगत्' को भेजी गई थी। समय–समय पर उस सामग्री को आर्यजगत् के पाठकों को परोसा जाता है। 'उत्पत्ति विज्ञान' पर वर्मा जी का लेख धारावाहिक रूप में प्रस्तुत है।–सम्पादक}

अंत में महाभारत युद्ध हुआ जिसमें कौरव दल का नाश हो गया और बहुत से ज्ञानी– विद्वान् मारे गये। उसके कुछ समय अर्थात् पाँच हज़ार वर्ष के बाद से 'महिधर, उव्वट, सायण आदि ने वेदों का अनर्थ कर डाला, जिनसे उस विद्या की पुस्तक का सम्मान नहीं रहा। वेद मंत्र ऐसे होते हैं कि एक मंत्र के दो, तीन अर्थ प्रकट होते हैं। उदाहरण के लिये, जैसे–अंग्रेज़ी भाषा में अंकल अर्थ–चाचा, मामा, ताया आदि निकलते हैं, इसी प्रकार संस्कृत में 'सैन्धव' का अर्थ–घोड़ा और लवण है। 'अश्व' का अर्थ–अग्नि, घोड़ा और इन्द्रियाँ भी है, वैसे ही, 'गो' का अर्थ गाय, पृथ्वी, और इन्द्रियाँ है। भूत का अर्थ जो होकर न रहे अर्थात् जो बीत गया उसे भूत काल कहते है, पंचतत्वों को भी पाँच महाभूत कहते हैं।

'वेद' वैदिक भाषा में है, लौकिक संस्कृत भाषा में नहीं, तथा वेदों के शब्द यौगिक होते हैं, लौकिक संस्कृत की तरह रूढ़ि नहीं। देखने में समान प्रतीत होने वाली लौकिक एवं वैदिक संस्कृत में काफी अन्तर है। अतः लौकिक संस्कृत के आधार पर वैदिक मंत्रों का ठीक–ठीक अर्थ नहीं किया जा सकता। वेद मंत्रों के यथार्थ को समझने के लिये निरुक्त एवं निघंटु का ज्ञान आवश्यक है। यथा–वेद मंत्र में आये हुए उर्वशी और पुरुरवा में दोनों शब्द अन्तरिक्ष पदार्थ के नाम हैं–उर्वशी–शब्द में किसी नारी का नाम नहीं है और न पुरुरवा किसी पुरुष का, इन दोनों का वैदिक अर्थ उर्वशी को विद्युत् और पुरुरवा को मेघ से उत्पन्न होने वाले गर्जन को कहा गया है। ऐसे ही अनेक शब्द हैं जिनका अर्थ विभिन्न शक्तियों और इन्द्रियों के भी नाम से प्रकट होता है। जिस प्रकार सूर्य के प्रकाश में कई रंग की किरणें होती हैं, उसी प्रकार वेद मंत्र के कई अर्थ होते हैं, किन्तु वह विद्या की पुस्तक होने से उसका अर्थ बुद्धि पूर्वक करना चाहिये।

एक और अनर्थ–

"श्री कृष्ण माखन चोर थे", उनके भक्तों ने वेद से कृष्ण की स्तेयवृत्ति सिद्ध करने का कैसा छल–पूर्ण प्रयास किया है। वस्तुतः **"तस्कराणां पतये नमः"** यजु. 16.21, के रुद्राध्याय का अंश है और यहाँ 'नमः' का वह अर्थ नहीं है जो वक्ता ने लिया। **'नमः'** के अनेक अर्थों में एक अर्थ दंडित करना भी है अतः नैरुक्त–प्रक्रिया के आधार पर **'तस्कराणां पतये नमः'** का अर्थ चोरों के स्वामी को नमस्कार करना न होकर, रुद्र–नामाधीश द्वारा उसे दण्डित करना ही माना जायेगा। वेद का वास्तविक अभिप्राय न जान कर अथवा जान–बूझकर उसे छिपाकर उसका दूषित अर्थ करना और उससे कृष्ण पर लगाये गये, पुराणकारों के मिथ्या आक्षेपों को सिद्ध करना कथमपि न्याय संगत नहीं कहा जा सकता।" ले.डा. भवानी लाल, भारतीय।

अतः इसी प्रकार अपने–अपने समय में भाष्यकारों ने अपने मत के अनुसार अर्थ किया– उनसे पशु यज्ञ, पशुबलि, प्रतिमा पूजन, इतिहास, जादू–टोना, भूत–प्रेत, बहुदेववाद, आदि इस प्रकार उस पवित्र गंगाजल को बिगाड़कर रख दिया, जिसका लाभ अंग्रेज इतिहास कारों ने उठाया। आर्यों को शिकारी, जंगली आदि कहकर सम्बोधित किया।

आज जो पाठशालाओं में इतिहास पढ़ाया जाता है, उसे डार्विन के विकासवाद के आधार पर, अंग्रेज शासन के समय लिखा गया था जो अफ्रिका के जंगली और आर्यावर्त्त से आर्य ऋषियों द्वारा बहिष्कार किये गये, संथाल आदि को आदिवासी कहा गया है (आज भारत स्वतन्त्र है, शिक्षामंत्रालय को चाहिये कि आर्य विद्वानों को बुलाकर, अपने भारतीय इतिहास में आदिम आर्य ऋषियों पर लगाये गये अवैदिक दोषारोपण को हटा दें)

और उन्होंने उन्हें गौमांस भक्षक तथा वेदों को गड़रियों का उटपटांग गाना बताया। (जिसका समर्थन (2007 में) वामपन्थियों ने भी किया।) ये लोग जिस भारत में पले, बढ़े, और पुष्ट हुए, उसी की बलि देने लेगे। जिस आर्यो के साहित्य ने संसार को सभ्यता और ज्ञान दिया आज उसी गौ रक्षक को गौ भक्षक कहने में तनिक भी नहीं हिचके।

क्या इतिहासकार बता सकता है कि किस काल मे आर्य लोग मांसाहारी थे ? वेद एवं वैदिक ग्रन्थों में अथवा कहीं भी कोई प्रमाणित नहीं कर सकता कि आर्य मांसाहारी, गौ भक्षक थे, अपने जैसे दूसरों पर आरोप लगाना आर्यों की संस्कृति सभ्यता को बदनाम करना है। जब कुरआन के विरुद्ध निषिद्ध पशु को मुसलमान लोग नहीं मार सकते, तब आर्य लोग वेद के विरुद्ध गौ को क्यों मार सकते हैं?

अतः अंग्रेज़ इतिहासकारों ने बिना सोचे समझे भारतीय आर्य सभ्यता को धूल में मिला दिया। उनके मत में ईसा के पूर्व सब जंगली थे, सभ्यता और ज्ञान तो अंग्रेज़ों ने दिया था। तो क्या महाभारत काल तक जो ऋषि और आर्यो की संस्कृत भाषा एवं सभ्यता भी वह असत्य थी। उस समय तो अंग्रेज़ों का योरोप और अरब आदि देश प्रायः असभ्य थे और उनके पूर्वज जंगलियों जैसा व्यवहार करते थे।

हजरत मोहम्मद साहब के पूर्व वहाँ के–अर्थात् अरब के कुरैशवंशी लोग–अत्याचारी, मूर्तिपूजक, पशुबलि, जूआ, शराब, लड़ाई, झगड़ा, मार–काट करते थे। महाभारत काल में 'आर्य धर्म' के अलावा, दूसरा कोई भी मत नहीं था, उसके बाद जब ऋषि न रहे, बहुत से प्रसिद्ध वैदिक विद्वान् महाभारत युद्ध में मारे जा चुके, तब कुछ समय बाद, जिसने जैसा समझा, उसने वैसा ही अपने–अपने देश की परिस्थितियों, व्यवहारों को देखकर–क्रमशः नये–नये 'वेदों के अनर्थ किये। मतों के कुछ भागों–विचारों को परस्पर किसी के माध्यम से जानकर सर्वप्रथम उसमें कुछ अपना अनुभव लगाकर "जरदुश्ती" मत निकला।' भारत के अल्पज्ञ ब्राह्मणों ने ऋषियों के नाम से अट्ठारह पुराण रच डाले, जिनमें कतिपय ऐतिहासिक बातों को छोड़ अन्य सब गपोड़े हैं। उन्होंने स्वयं को गुरु और पूज्य बना लिया। उनका श्लोक था **"ब्रह्म–वाक्यं जनार्दनः"** जितना हो सके उन्हें अन्न, धन, सम्पत्ति और मरने के बाद भी, गौ दान आदि करो, देवताओं–देवियों की मूर्ति मंदिरों में बनवाकर, ब्राह्मणों से ही पूजन करवाओ, तीर्थ करने, गंगा स्नान से पाप नष्ट हो जाते हैं। राम और कृष्ण का नाम जपते रहो। कर्मगत जाति को, जन्मगत बना दिया।

(यहाँ प्रश्न कर्त्ता कहते हैं कि–'जिनकी जनन क्रिया एक हो उसे ही जाति कहते हैं। समाधान–जनन क्रिया एक होने से कोई जन्म से हिन्दू, मुस्लिम, सिक्ख, ईसाई आदि बनकर नहीं आता। उनकी जाति उनके सामाजिक धार्मिक नियम के अनुसार बाद में होती है, यथा–मुसलमान का बच्चा जन्म से मुसलमानी (कटा–कटाया) बन कर नहीं पैदा होता किन्तु उसे बाद में उसके समाज और मजहब मुसलमानी करवाते हैं। अतः इसी नियम को जाति कहते हैं। हिन्दुओं में वर्ण जाति होता है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। यह शूद्र चौथा वर्ण है, नीच जाति नहीं (शुद्र दो प्रकार के होते हैं एक वर्ण शूद्र और एक अतिशूद्र) अतः कर्मानुसार हिन्दुओं.में जाति परिवर्तन के नियम पालन करने को वर्ण व्यवस्था कहते हैं।)

अतः इन्हीं लोगों के कारण भारत में बहुत कुसंस्कार फैल गया। भारत में जैनमत, बौद्धमत, शैवमत और एक वाममार्गी मत बन गए, वाममार्गियों ने ही बलिप्रथा, यज्ञों में पशुहत्या लगभग 3000 (तीन हज़ार) वर्ष पूर्व से चलाई।

इस विषय पर बुद्ध के सम्बन्ध में डॉ. मुमुक्ष आर्य लिखते हैं कि–"दुर्भाग्य से अश्वमेध व गोमेध का कुछ अज्ञानी व तथाकथित पंडितों ने अर्थ यह लिया कि राजा घोड़े अथवा गाय की बलि देकर यज्ञ करे, महात्मा बुद्ध ने यह सब पाप देखकर तर्क किया कि अगर घोड़े व गाय को काट कर हवन करने से घोड़ा व गाय स्वर्ग को जाते हैं तो वे तथा कथित पंडित लोग अपने माँ–बाप को काट कर यज्ञ में डालें तो वे भी स्वर्ग में चले जाएँ।"

संस्कृत भाषा में यदि बुद्ध पारंगत होते तो वे स्वयं इसका वास्तविक अर्थ लोगों के सामने रखते (वैदिक **'अश्व'** का अर्थ केवल घोड़ा नहीं 'अग्नि' भी है देखिये–**'अश्वं न त्वा वारवन्तम् विदंध्या अग्निं नमोभिः।** (ऋग्वेद) अर्थात् अश्वं का अर्थ अग्नि भी है।

वैदिक **"अज"** का अर्थ अन्नादि पदार्थ है। **'मेघ'** का अर्थ यज्ञ है, इससे सिद्ध हुआ कि यज्ञाग्नि में अन्नादि सामग्रियों से होम करना चाहिये।

स.प्र. एकादश समु. में "ब्राह्मण ग्रन्थों में अश्वमेध, गोमेध, नरमेध आदि जो मंत्र हैं– उनका सत्यार्थ इस प्रकार हैः–

राष्ट्रं वा अश्वमेधः।। शत. 13–1–6–3। **अन्नथंहि गौः।।**

शेष पृष्ठ 09 पर ☞

गीता और महर्षि दयानन्द

● अमर स्वामी

{इससे पहली किश्त आर्यजगत् के अंक 03 से 09 मई तक में पढ़ें}

गतांक से आगे...

१२. इसी ग्रन्थ के इसी भाग में पृष्ठ 191 पर संवत् 1927 मिर्जापुर की एक घटना लिखी है कि–

एक दिन एक सज्जन जो गीता का बड़ा प्रेमी था–स्वामी जी के पास आकर बोला कि महाराज मैंने गीता की अनेक टीकाएँ देखी हैं, परन्तु इस श्लोक का अर्थ समझ में नहीं आया, आप अनुग्रह करके समझा दें।

'सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।'

स्वामी जी ने इसका अर्थ किया कि 'धर्मान्' शब्द को यहाँ 'अधर्मान्' समझना चाहिए।

'शकन्ध्वादिषु पररूपं वाच्यम्।' इस व्याकरण नियम के अनुसार 'सर्व' के वकार में जो अकार है वह पहले **'सर्व अधर्मान्'** था। अकार का पररूप होकर सो **सर्वधर्मान्** हो गया। इस प्रकार यद्यपि **अधर्मान्** शब्द ने **धर्मान्** का रूप धारण कर लिया परन्तु वास्तव में वह **'अधर्मान्'** ही रहा। यह अर्थ सुनकर वह बहुत प्रसन्न हुआ और स्वामी जी से उसने इस अर्थ की पुष्टि में जब प्रमाण माँगे तो उन्होंने वेद के दो–तीन मन्त्रों के प्रमाण देकर उसका सन्तोष कर दिया।

यहाँ स्वामी जी गीता को त्रिदोष का सन्निपात बता देते या कड़क कर कह देते कि गीता कल की राण्ड है, इसके विषय में हमसे कुछ मत पूछो। यदि गीता को नहीं मानते थे तो वे इतने समाधानों के झगड़े में क्यों पड़े और क्यों उसके अर्थ समझाने में इतना परिश्रम करते रहे? यह बात गीता विरोधियों की समझ में नहीं आ सकती।

13. इसी ग्रन्थ के भाग 2 पृष्ठ 231 संवत् 1937 विक्रमी में महाराज काशी में विराजमान थे। उस प्रसंग में लिखा है कि–एक दिन एक नवीन वेदान्ती पंडित का महाराज से वार्तालाप हो रहा था, उसने गीता का श्लोक–

ईश्वरः सर्वभूतानां, हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति।
भ्रामयन् सर्वभूतानि, यंत्रारूढानि मायया।।

गीता 18.62

पढ़ कर कहा कि देखो जो कुछ करता है ईश्वर ही करता है, जीव कुछ नहीं करता। महाराज ने कहा कि इसका यह अर्थ है कि–ईश्वर पृथ्वी आदि सब भूतों को घुमा रहा है तुम व्यर्थ ही सब दोष ईश्वर के मत्थे मढ़ना चाहते हो। यह सुनकर पंडित तथा अन्य पंडित जो उस समय वहाँ उपस्थित थे सन्न हो गये और सब ने महाराज के अर्थों की सत्यता को स्वीकार किया।

गीता का यही श्लोक और उसका यही पौराणिक वाला अर्थ लेकर ही हमारे एक विद्वान् ने गीता को सिद्धान्तों के विरुद्ध सिद्ध करने का यत्न किया था। ऋषि दयानन्द जी महाराज के किये इस अर्थ को न पढ़ा न सुना, यदि वह इन को पढ़ या सुन लेते तो वह भी चकित हो जाते और महाराज के अर्थ को स्वीकार करते।

बाबू देवेन्द्रनाथ जी मुखोपाध्याय तथा बाबू घासीराम जी एम.ए. द्वारा लिखे गये ऋषि दयानन्द के जीवन चरित्र से इतने प्रमाण दिये गये।

14. श्री स्वामी सत्यानंद जी द्वारा लिखे **'दयानन्द प्रकाश'** ग्रंथ के पृष्ट 79 पर जयपुर के निकट अचरोल में महाराज के निवास का वर्णन है, वहाँ लिखा है कि–'स्वामी जी मनुस्मृति, उपनिषद् और गीता आदि ग्रंथों के प्रकरण सुनाकर कृतार्थ किया करते थे।'

15. इसी पृष्ठ पर और लिखा है कि:–

"स्वामी जी महाराज चार मास के लगभग वहाँ (अचरोल में) टिके। नित्य प्रति उपनिषदों और गीता की कथा सुनाया करते थे। प्रतिमा पूजन का खण्डन करते थे और कहते थे कि ध्यान भीतर करना चाहिये।'

दयानंद प्रकाश पृष्ठ 99 पर लिखा है कि–

एक दिन सन्त अमीर सिंह निर्मले ने **चित्सुखी** की एक पंक्ति स्वामी जी से पूछी। स्वामी जी ने उसे उत्तर देते हुए कहा कि–आपके लिए मैं इसका अर्थ कर देता हूँ। परंतु यह अनार्ष ग्रंथ है। इसे प्रमाण कोटि में नहीं मानना चाहिये। ऐसे वाक्य महाराज ने गीता के लिये कहीं भी नहीं कहे।

16. भगवद्गीता प्रक्षिप्त नहीं है। इस समय के दो तीन पण्डितम्मन्य अपना सारा बल यह सिद्ध करने में ही लगा रहे है कि गीता सारी की सारी प्रक्षिप्त है। वह लोग अपने आप को सारे आर्यसमाजी पंडितों से ही नहीं ऋषि दयानन्द जी से भी बड़ा समझदार प्रकट करना चाहते हैं।

दयानन्द प्रकाश पृष्ठ 206 पर लिखा है।

मिर्जापुर में बालकृष्ण दास नामक एक वैरागी महन्त रहता था। वह महाभारत के संशोधन में लगा हुआ था। वास्तव में तो वह महाभारत के 24 सहस्र श्लोक रखना चाहता था। परन्तु उस समय उसने जो पुस्तक छपवाई थी उसमें 30 सहस्र ही श्लोक थे। उसने **भगवद्गीता** को भी प्रक्षिप्त समझ कर निकाल दिया था।

> **गीता का यही श्लोक और उसका यही पौराणिक वाला अर्थ लेकर ही हमारे एक विद्वान् ने गीता को सिद्धान्तों के विरुद्ध सिद्ध करने का यत्न किया था। ऋषि दयानन्द जी महाराज के किये इस अर्थ को न पढ़ा न सुना, यदि वह इन को पढ़ या सुन लेते तो वह भी चकित हो जाते और महाराज के अर्थ को स्वीकार करते।**

सुगन्धी लाल नामक एक धनिक व्यक्ति गीता का बड़ा भक्त था। वह वैरागी बाबा की इस अनधिकार चेष्टा से बहुत ही चिढ़ गया। उसने बाबा जी के इस अनर्थ की दुहाई स्वामी दयानन्द जी के आगे आकर दी। "महाराज ने कहा उसका गीता को प्रक्षिप्त कहना सत्य नहीं है। इस पर जब उसका जी चाहे शास्त्रार्थ कर ले।"

"उक्त बाबा जी ने गीता के प्रक्षिप्त होने पर शास्त्रार्थ नहीं किया। छोटूराम नामक एक व्यक्ति स्वामी जी से उपनिषद् पढ़ने आया करता था। छोटूराम ने बाबा जी को स्वामी जी की सम्मति सुना दी, इससे बाबा जी रुष्ट तो बहुत हुए। परन्तु शास्त्रार्थ को यह कह कर टालते रहे कि हम दूसरे के स्थान पर नहीं जाया करते। स्वामी जी ने उन्हें बहुतेरा कहलाया कि यह स्थान भी हमारा नहीं है। यहाँ नहीं आ सकते तो पास के उद्यान में आ जाइये। अथवा गंगा के पुलिन पर बैठ कर विचार कर लीजिये। परन्तु बाबा जी ने एक न मानी।

गीता प्रक्षिप्त नहीं– इसी शीर्षक से यह वृत्त–श्री पं. हरिश्चन्द्र जी विद्यालंकार कृत **'महर्षि दयानंद सरस्वती'** नामक सचित्र प्रामाणिक जीवन चरित्र के पृष्ठ 115 पर भी अंकित है।

संख्या 10 में लिखा वृत्त भी, इस पुस्तक के पृष्ठ 75 पर, विस्तार के साथ राव कर्ण सिंह के भेजे गुण्डों के आक्रमण के सम्बन्ध में लिखा है। वहाँ स्वामी जी के अंगरक्षक का नाम कैथल सिंह लिखा है।

संख्या 12 का वृत्त इस ग्रन्थ में पृष्ठ 114 पर अंकित है जिसमें **"सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज"** का समाधान है।

17. दयानन्द प्रकाश पृष्ठ 122–123 पर डुमरांव में वहाँ के महाअभिमानी शैव पं. दुर्गादत्त से वार्तालाप का वृत्त लिखा है। वहाँ बताया गया है कि ऋषि दयानंद जी और पं.दुर्गादत्त में गीता के श्लोक **'सर्व धर्मान् परित्यज्य'** पर भी विचार विनिमय हुआ था।

18. 'गीता को ऋषि ने शास्त्र कहा–देवेन्द्रनाथ जी मुखोपाध्याय कृत 'महर्षि दयानन्द का जीवन चरित्र भाग 1 पृष्ठ 145 पर ऋषि के कन्नौज निवास का वर्णन है, वहाँ लिखा है कि–

बलिवैश्वदेव यज्ञ के विषय में स्वामी जी ने कहा कि जो बलिवैश्वदेव यज्ञ किये बिना भोजन करते हैं यह मानो गो–मांस भक्षण करते हैं। पं. हरि शंकर जी ने कहा कि ऐसा न कहो, यहाँ तो कोई भी बलिवैश्वदेव यज्ञ नहीं करता है। स्वामी जी ने कहा कि–मैं थोड़ा कहता हूँ, शास्त्र में तो इससे भी अधिक लिखा है, और गीता का श्लोक पढ़ा–

यज्ञशिष्टाशिनः सन्तो मुच्यन्ते सर्वकिल्बिषैः।
भुंजते ते त्वघं पापा, ये पचन्त्यात्मकारणात्।।

गीता 3.13

अर्थात् वह पापी लोग पाप का ही भक्षण करते हैं जो यज्ञ बिना, अपने ही लिए पकाते और आप ही खाते हैं।

19. संस्कार विधि और सत्यार्थ प्रकाश में गीता के प्रमाण–संस्कार–विधि में गीता के केवल दो श्लोकों का प्रयोग हुआ है। गृहस्थाश्रम प्रकरण में वर्ण व्यवस्था का भी वर्णन है वहाँ ब्राह्मण के लक्षणों में पहिले मनुस्मृति का श्लोक–

अध्यापनमध्ययनम्–आदि देकर नीचे गीता का–

शमो दमस्तपः शौचं क्षान्तिरार्जवमेव च।
ज्ञानं विज्ञानमास्तिक्यं, ब्रह्मकर्म स्वभावजम्।।

गीता 18.42

यह श्लोक दिया है।

क्रमशः

शास्त्रार्थ–महारथी अमर स्वामी ग्रन्थ संग्रह' में संकलित 'गीता और महर्षि दयानन्द' से साभार (संपादक–डॉ. ज्वलन्त शास्त्री)

☞ पृष्ठ 05 का शेष

जैसा मैंने दयानन्द ...

बजे तक काम होता था। इस प्रकार हमेशा कार्य होता था।

एक दिन 2 या ढाई बजे स्वामी जी के पास राव साहब मसूदा घोड़े पर सवार होकर बाग में, जहाँ स्वामी जी का डेरा लगा हुआ था, 10 या 12 सरदारों सहित पधारे और बातें होती रहीं। इसी तरह दूसरे दिन भी पधारे, स्वामी जी ने उपदेश रूप में राव साहब से कहा आप तो बेकाम हैं मुझे बहुत काम करना है आप कृपा करके हमारे जाने के लिए सवारी का प्रबन्ध करा दें। राव साहब ने विनय पूर्वक कहा ! मुझ से कौन सा अपराध हुआ जो आप जल्दी से पधारते हैं। जब एक मास के लिए निश्चित हो चुका है तब इतना जल्दी क्यों ? इस पर स्वामी जी ने स्पष्ट रूप से कहा कि आप समय की कोई इज्जत नहीं करते। यदि आप पधारा करें तो सायंकाल 5 बजे से रात्रि को 10 बजे तक। हम से जो कोई मिलना चाहे या शंका समाधान करना चाहे इसी समय में कर सकता है, आप कल भी मध्याह्न काल में आये थे आज फिर उसी समय आ गये। यह मेरा वेदभाष्य लिखने का समय है इसलिए मैं समय के विरुद्ध कोई काम नहीं कर सकता। इस पर राव सहिब ने क्षमा माँगी और कहा कि आगे से सायंकाल के समय आया करेंगे फिर कभी दोपहर को नहीं पधारे।

बाग के समीप एक चबूतरा है उस पर जाजम बिछ जाया करती। नित्य प्रति लोग आते, शंका–समाधान हुआ करता। देश की बुरी अवस्था को दूर करने के उपायों पर बातें हुआ करतीं, सुधार कैसे हो आदि विषयों पर उपदेश हुआ करते थे। उन दिनों में एक पुच्छलतारा निकला करता था उस पर किसी ने पूछा कि इस का कुछ फल है। इस पर स्वामी जी ने कहा कि देश में इसका फल अच्छा नहीं है देश के दुर्भाग्य का सूचक है। राव साहब की आज्ञानुसार गढ़ में व्याख्यानमाला प्रारम्भ हुई, लगातार कई दिनों तक होती रही। उन्हीं दिनों में डाक्टर पादरी शूल ब्रेड साहब और देशी पादरी बिहारीलाल जी मिशन स्कूल जो मसूदे में है देखने को आये हुए थे। राव साहब के निमन्त्रणानुसार व्याख्यान सुनने गढ़ में गये। जब पहले कभी आया करते थे तो राव साहब के बराबर उसी फर्श पर जूते पहने कुर्सियों पर बैठा करते थे। इन दिनों स्वामी जी ने कहा कि आपके बेटे, भाई तथा अन्य सरदार तो फर्श पर बैठे रहें और ये जूतियों समेत कुर्सियों पर बैठें। आप लोगों को अपनी आर्य जाति के गौरव पर अभिमान नहीं है। स्वामी जी की आज्ञानुसार जाजम का एक कोना उलटवा दिया गया और कुर्सियाँ दूर लगवा दीं, जब वे आये उन्हें वहीं पर बैठा दिया गया। वेदों के विषय पर वार्तालाप आरम्भ हुआ, पादरी साहब ने मांसाहार तथा अन्य कई बातें ऋग्वेद में बतलाईं। स्वामी जी ने उनका खूब खण्डन किया, पादरी साहब ने स्वामी जी से कहा कि मेरे पास ऋग्वेद है, मैं बता सकता हूँ। स्वामी जी ने कहा कि मेम साहब को चिट्ठी लिखो सवार जाकर प्रातःकाल वेद ले आवेगा। हमारे पास भी वेद मौजूद है। टालमटोल के पश्चात् अन्त में पादरी साहब ने कहा कि जब आप ब्यावर आवें तो मुझ से मिलें। व्याख्यान सुन कर पादरी साहब चले गये।

स्वामी जी की दिनचर्या इस प्रकार थी। प्रातः काल जल्दी उठ जाते थे। शौचादि से निवृत्त होकर एक दण्ड (जो बद्रीनारायण के पहाड़ों का गाँठदार था) हाथ में लेकर शरीर पर कौपीन और अंगोछा लपेट कर घूमने को चले जाते थे। बस्ती से तीन या चार मील पर किसी अच्छे स्थान पर बैठ कर योगाभ्यास प्राणायाम करते थे। एक दिन स्वामी जी ध्यानावस्थित थे इतने में एक बघेरा उनके पास से निकल गया। इस दृश्य को एक ग्रामीण ने दूर से देखा। उसने स्वयं हम लोगों से कहा कि महाराज को बघेरा मार डालता, राम जी ने बचाया। महाराज अकेले जंगल में न जाया करें।

स्वामी जी की प्रेरणा से एक बड़ा यज्ञ मोती डूंगरी नामक स्थान पर कई दिन तक हुआ। उस अवसर पर कई एक सज्जनों ने यज्ञोपवीत धारण किये। मेरा छोटा भाई भी सम्मिलित था जिसके लिए ब्राह्मणों ने बड़ी गड़बड़ मचाई थी। उन्हीं महानुभावों में से माननीय पूज्यवर कोठारी सुजानसिंह जी साहब सौभाग्यवश यहाँ पर उपस्थित हैं जिन्होंने स्वामी जी के कर कमलों से यज्ञोपवीत धारण कर गुरुमन्त्र उपदेशपूर्वक ग्रहण किया।

क्रमशः

सम्पादक–डॉ. भवानी लाल भारतीय

☞ पृष्ठ 06 का शेष

मानव-निर्माण में ...

बच्चों को ऐसी पुस्तकें न पढ़ाई जाएँ, जिनको पढ़ कर बेटे अपने बड़ों का मान–सम्मान करना ही भूल जायें। अपने पूर्वजों, अपनी संस्कृति, अपने धर्म और अपनी सभ्यता के प्रति हीन भावना पैदा करने वाली, शिक्षा प्रणाली जहाँ व्यक्ति और राष्ट्र को स्वाभिमान से वंचित करती है, वहाँ उनकी अस्मिता छीनकर जीवन में निराशा का संचार करती है।

मा विद्विषावहै आज शिक्षा–प्रणाली केवल द्वेष–भावना को प्रोत्साहन देती है, पर वैदिक शिक्षा प्रणाली द्वेष भावना के स्थान पर पारस्परिक सहयोग को महत्त्व देती है। यह सहयोग केवल गुरु और शिष्य का ही नहीं, शिष्यों के आपसी सहयोग का भी सूचक है।

यही शिक्षा का वैदिक आदर्श है और होना चाहिए। इसी उद्देश्य को लक्ष्य में रखा जाए तो शिक्षा–प्रणाली में परिवर्तन के सम्बन्ध में दिशाहीनता की स्थिति समाप्त हो सकती है और राष्ट्र के उद्धार के साथ–साथ विश्व– मानव की एकता के स्वप्न को यथार्थ के धरातल पर उतारा जा सकता है।

शिक्षा का मुख्य तत्त्व है, ज्ञान की प्राप्ति अथवा ज्ञान का संवर्द्धन। उस प्राप्त ज्ञान के आधार पर उनका मानव–जीवन के लिए उपयोग जिससे विद्या, सभ्यता, धर्मात्मता, जितेन्द्रियता की वृद्धि होवे और अविद्यादि दोष छूट जायें, उसको शिक्षा कहते हैं। इस प्रकार शिक्षा की परिभाषा में विद्या (ज्ञान) की प्राप्ति और उनके आधार पर मानवीय गुणों–सभ्यता, धर्म, शिष्टाचार का होना आवश्यक है। प्रसिद्ध शिक्षाशास्त्री डॉ. राधाकृष्णन् के अनुसार–**"भारत सहित सारे संसार के कष्टों का कारण यह है कि शिक्षा का सम्बन्ध नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों की प्राप्ति से न रहकर केवल मस्तिष्क के विकास से रह गया है, जिस शिक्षा में अन्तरात्मा की अवहेलना है, उसे पूर्ण नहीं माना जा सकता।"**

क्रमशः

खालसा महाविद्यालय दिल्ली विश्वविद्यालय

☞ पृष्ठ 07 का शेष

उत्पत्ति का विज्ञान ...

शत–4–3–1–25।। **अग्निर्वा अश्वः।।** शतपथ ब्राह्मण।। अर्थात् घोड़े, गाय आदि पशु तथा मनुष्य मार के होम करना नहीं लिखा, केवल वाममार्गियों के ग्रन्थों में ऐसा अनर्थ लिखा है, किन्तु यह भी बात वाममार्गियों ने चलाई और जहाँ–जहाँ लिखे हैं, वहाँ–वहाँ भी वाममार्गियों ने प्रक्षेप किया है। देखो! राजा न्याय धर्म से प्रजा का पालन करे, विद्यादि का देने हारा यजमान और अग्नि में घी आदि का होम करना **'अश्वमेध'**, अन्न, इन्द्रियाँ, किरण, पृथिवी आदि को पवित्र रखना **'गोमेघ'** और जब मनुष्य मर जाए तब उसके शरीर का विधिपूर्वक दाह करना **'नरमेध'** कहाता है)।

इसके विपरीत तथाकथित पण्ड़ितों के यह कहने पर कि यह सब तो वेदों में लिखा है बुद्ध ने वेदों को ही गलत कह डाला। परिणाम स्वरुप जब राजा अशोक द्वारा बुद्ध की शिक्षाओं का सरकारी खर्च पर देश–विदेश में प्रचार हुआ, अनुयायियों की संख्या में वृद्धि हुई तो पूरे देश में वैदिक विचारधारा का खंडन होने लगा। वेद व वैदिक साहित्य के पुस्तकालयों को अग्नि की भेंट किया जाने लगा। बुद्ध की बड़ी–बड़ी प्रतिमाओं को मन्दिरों में स्थापित कर पूजा होने लगी, यह पाषाड़ पूजा अथवा मूर्तिपूजा का सूत्रपात था। तथाकथित पण्डितों ने देखा कि लोग बुद्ध मन्दिरों में आकर्षित हो रहे हैं, उसकी मूर्तियों की पूजा की जा रही है तो उन्होंने भी हजारों लाखों वर्ष पूर्व हुए मर्यादा पुरुषोत्तम राम व योगीराज श्रीकृष्ण जी की काल्पनिक मूर्तियों को मन्दिरों में स्थापित कर पूजना प्रारंभ कर दिया। लोगों को अपनी ओर आकर्षित करने के लिये अपने मन्दिरों में घण्टे घड़ियाल बजाने आरंभ कर दिये।"

कहाँ तक लिखें, वेदों का बहुत अनर्थ हुआ। और ये जितने–'जरदुश्ती, ईसाई, इस्लाम, बौद्ध, जैन, पौराणिक आदि मत निकले हैं, उन सभी में वैदिक साहित्य के अंश हैं।

(आज से 2300 वर्ष पूर्व, दक्षिण भारत के वेदों के विद्वान् शंकराचार्य ने जैनियों को हराकर, मन्दिरों को पाठशालाओं में परिवर्तित करने का परामर्श दिया था। उनमें वेदों के पठन–पाठन के प्रबन्ध की भी इच्छा प्रकट की थी। शंकराचार्य ने जैनियों को हराने के लिये जो मत अपनाया था–वह उस समय के लिये ठीक था किन्तु वेद के अनुसार केवल ब्रह्म ही सत्य नहीं, जीव और जगत् को भी सत्य मानना था। इस विषय को देखिये सत्यार्थप्रकाश में)

क्रमशः

मु. पो. मुरारई, जिला–वीरभूम
(पश्चिम बंगाल)

पत्र/कविता

आर्य वीरों से

हम जीवन का मूल्य चुकाएँ
आर्य लोग हम अन्धकार को चीरें, आगे बढ़ते जाएँ
आर्यवीर की शान न जाए, होठों से मुस्कान न जाए
प्राण भले ही जाएं, लेकिन जीवन का अरमान न जाए
ज्यों ज्यों शूल चुभें इस पथ में त्यों त्यों पग बढ़ते ही जाएँ।
हम जीवन....
जीने का अधिकार उसे है जो जीवन की कीमत भर दे
मृत्यु से वह बच सकता है जो मरने से पहले सर दे
आओ जीवन के लोभी जग को मरना जीना सिखलाएँ।
हम जीवन.....
विजय चरण उनके छूती है जिनके प्राण हथेली पर हों
लक्ष्य सिद्धि तब ही संभव है रण में जूझने वाले नर हों
स्वयं निमन्त्रित करें आपदाओं को, जो दुःख में मुस्काएं।
हम जीवन......
प्रण कर लो, हम जीवन देकर भी, भारत का मान रखेंगे
कंटक पूरित पथ हो कितना, दयानन्द के वीर बढ़ेंगे
गिरि गहवर, नाला, घाटी चीरेंगी वीरों की सेनाएं।
हम जीवन ....

डाकू आर्य संन्यासी बन गया

डॉ. विवेक आर्य

सन 1976 में पाणिनि कन्या गुरुकुल, बनारस की आचार्या प्रज्ञा देवी को बोलथरा रोड,जिला आजमगढ़,उत्तर प्रदेश के एक स्वर्णकार ने अपने ग्राम में चतुर्वेद परायण यज्ञ संपन्न करने हेतु आमंत्रित किया था। प्रज्ञा देवी के साथ सुप्रसिद्ध भजन उपदेशक श्री ब्रिजपाल जी कर्मठ एवं पंडित ओमप्रकाश वर्मा को भी आमंत्रित किया गया था। कार्यक्रम के अंतिम दिन एक विशेष घटना घटित हुई। उस दिन कार्यक्रम में एक डाकू कंधे पर बन्दुक टाँगे हुए वहाँ पर आकर बैठ गया। वहाँ के मूल निवासियों ने तो उसे पहचान लिया पर उपदेशक विद्वान् उसे न पहचान पाये। इस अवसर पर पंडित ओमप्रकाश जी ने संयोगवश पानीपत हरियाणा में घटित एक घटना का वर्णन किया जिसमें पंडित गणपति शर्मा एक बार आर्यसमाज के उत्सव में उपदेश देते हुए कह रहे थे की मनुष्य को अपने किये हुए कर्मो का फल भोगना ही पड़ता हैं। शुभकर्मों का फल शुभ और अशुभ कर्मो का फल अशुभ ही भोगना पड़ता हैं। ईश्वर किसी के किये पापों का फल अवश्य देता है। किसी भी व्यक्ति के पाप क्षमा नहीं करता। सत्संग तथा स्वाध्याय से ईश्वर की न्याय व्यवस्था को भली भांति समझकर यदि कोई मनुष्य पापकर्म करना छोड़ देता हैं तो भविष्य में पापों से मुक्त हो जाता हैं। परन्तु पूर्व में कर चुके पापों के फल से मुक्त नहीं हो सकता, उसे उसका फल भोगना ही पड़ता है। उस प्रवचन को सुनने वालों में उस दिन श्रोताओं में मुगला नामक एक डाकू भी था। उस पर पंडित गणपति शर्मा के उपदेशों का अद्भुत प्रभाव पड़ा व उसने डाके डालने बंद करके शुद्ध व पवित्र जीवन अपना लिया।

महाविदुशी प्रज्ञादेवी ने मन्त्रों की व्याख्या करते हुए पापों से बचने व ईश्वर की शुद्ध न्याय व्यवस्था को समझकर सन्मार्ग पर चलने की प्रेरणा दी व प्रभावशाली शैली में उन्होंने कहाँ **अवश्यमेव भोक्तव्यम कृतं कर्म शुभ अशुभम्** अर्थात कृत पापों के फल भोगने से आज तक कोई जीव बचा नहीं तथा न ही भविष्य में कोई बच सकेगा।

प्रज्ञादेवी जी के उपदेश के खत्म होने तक सभा में अनेक श्रोतागण वहां से डाकू के भय से चले गए परन्तु वह डाकू कार्यक्रम खत्म होने पर ही गया। उसके जाने के बाद आयोजकों ने बताया की यहाँ जो बंदूकधारी व्यक्ति आज आया था वह इस क्षेत्र का कुख्यात सुदामा नामक डाकू था।

कुछ दिनों के पश्चात वही सुदामा बहन प्रज्ञादेवी आचार्या जी के गुरुकुल के प्रवेश द्वार पर आकर खड़ा हो गया व पुकारने लगा बाई जी! बाई जी ! गुरुकुल का द्वार खोला गया तो प्रज्ञा देवी जी ने पूछा कहो–क्या काम है ? कहाँ से आये हो? कौन हो तुम? वह व्यक्ति प्रज्ञादेवी जी के चरणों में प्रणाम करके बोला'– मैं सुदामा डाकू हूँ। मैंने बोलथरा रोड में आपके कार्यकर्म को देखा–सुना था। मैं अपने घर में भी अब हवन कराना चाहता हूँ व उन पंडित जी से मिलना व उनके उपदेश भी सुनना चाहता हूँ, जिन्होंने कर्मों का फल भोगना ही पड़ेगा, यह बताया था। आपके उपदेश का भी मुझ पर बहुत प्रभाव पड़ा था। प्रज्ञा देवी ने पूछा की आप कब यह कार्य करवाना चाहते हैं? सुदामा ने कहाँ– आज से 6–7 मास बाद, मई या जून में।

प्रज्ञा जी ने स्वीकृति दे दी। अपने घर लौटकर सुदामा ने अपने खेतों में हल चलाया व गायत्री मंत्र का प्रतिदिन पाठ करने लगा। तब नवम्बर का महीना चल रहा था. गेहूं की फसल उन्हीं दिनों में बोई जाती है। सुदामा ने डाके डाल न त्यागकर इसी काम में स्वयं को व्यस्त कर लिया। अप्रैल मास में जब फसल घर आ गयी तो निश्चित दिनों में मई में विद्वान उसके घर पर पहुँच गए। वहाँ प्रतिदिन दोनों समय हवन और उपदेश तथा भजनों का कार्यक्रम चला। भोजन में रोटी के साथ केवल घिया (लौकी)ही हर रोज दी जाती थी। रात को दूध ज़रुर दिया जाता था। ओमप्रकाश वर्मा जी ने सुदामा से पूछा की दोनों समय घिया खिलाने के पीछे क्या रहस्य है। सुदामा ने कहाँ की मेरे घर में जो भी सामान हैं वह सब डाके डालकर ही प्राप्त किया गया है। उसे अपने उपदेशकों को खिलाने का मेरा मन आज्ञा नहीं दे रहा है। मेरी अपनी मेहनत से खेतों में उपजाया हुआ गेहू और घिया से विद्वानों का सत्कार किया है और मेरी गौ माता भी अभी ही ब्याही है जिसका दूध आपको पिलाता हूँ।

यज्ञ के कार्यक्रम के संपन्न होने के पश्चात् सुदामा ने विद्वानों को दक्षिणा देनी चाही तो विद्वानों ने कहाँ कि सुदामा जी आपको पाकर हम धन्य हो गए हैं। आप आर्य बनें यही हमारे लिए दक्षिणा है। सुदामा ने कहा–मैंने सुना हैं की बिना दक्षिणा के हवन आदि व्यर्थ हैं। इसलिए विद्वानों को दक्षिणा अवश्य दी जायेगी। कुछ दिनों बाद सुदामा डाकू वाराणसी में कुटिया बनाकर अगले 3 वर्षो तक प्रज्ञा देवी से संस्कृत सीखता रहा। कालांतर में उसने संन्यास ग्रहण कर **स्वामी देवानंद सरस्वती** के नाम से प्रसिद्धि पाई।

इतिहास साक्षी है बुराई के मार्ग पर चल रहे अनेक व्यक्ति सत्य मार्ग पर चल रही श्रेष्ठ आर्य आत्माओं के संसर्ग से न केवल दोषों से मुक्त हुए अपितु अनेकों के मार्गदर्शक भी बने। स्वामी श्रद्धानंद ने जब गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना की तो एक समय कुछ डाकू लूटपाट के इरादे से गुरुकुल में आ गए थे। स्वामी श्रद्धानंद ने अत्यंत दिलेरी से गुरुकुल का उद्देश्य उन्हें समझाया तो वे न केवल गुरुकुल को बिना हानि पहुंचाए वापिस चले गए अपितु गुरुकुल को दान भी देकर गए थे।

स्वामी दर्शानानद जी महाराज के उपदेशों को सुनकर पीरु सिंह नामक डाकू ने हिंसा का परित्याग इसी प्रकार कर दिया था और कालांतर में वैदिक धर्म के प्रचार प्रसार के लिए गुरुकुल मतिंडू की स्थापना की थी।

इसी प्रकार की घटनायें पंडित लेखराम, भाई परमानन्द जी के जीवन में भी सुनने को मिलती हैं।

मनुष्य ने अपने जीवन में पहले चाहे कितने भी अशुभ कर्म किये हो परन्तु जब भी उसे श्रेष्ठ मार्ग ग्रहण करने का अवसर मिले तो उसे तत्काल उस मार्ग को ग्रहण कर लेना चाहिए।

संपर्क–9310679090

अखिलभारतीय-शास्त्रस्पर्धा में गुरुकुल रुड़की की छात्राओं का उत्कृष्ट प्रदर्शन

डी. केन्द्रिय संस्कृत विश्वविद्यालय नई दिल्ली द्वारा तमिलनाडु के कांचीपुरम् में आयोजित 63वीं अखिल भारतीयशास्त्रस्पर्धा में उत्कृष्ट प्रदर्शन करते हुए विभिन्न शास्त्रस्पर्धाओं में सात छात्राओं ने प्रथम स्थान प्राप्त कर गुरुकुल व प्रदेश का मान बढ़ाया। हरियाणा राज्य का प्रतिनिधित्व करते हुए गुरुकुल की छात्राओं कु. ऋचा, अंशिका, दिव्यागंना, दिव्या, प्राची, सोनाक्षी, हिमांशी ने क्रमशः सांख्ययोगभाषण, अमरकोषकण्ठपाठ, काव्यकण्ठपाठ, दर्शनसूत्रकण्ठपाठ, रामायणकण्ठपाठ, उपनिषत्कण्ठपाठ व अष्टाध्यायीकण्ठपाठ में प्रथम स्थान प्राप्त किया। इसके साथ ही कु. दीपांशी ने पुराणेतिहासशलाकापरीक्षा में तृतीय स्थान प्राप्त किया।

गुरु की प्राचार्या पद्मश्री डॉ. सुकामा जी ने सभी विजेता छात्राओं को भूरिशः शुभकामनाएँ गुरुकुल व आशीर्वाद प्रदान किया।

डी.ए.वी. न्यू पनवेल मुम्बई में 'समर्पण दिवस'

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, नवीन पनवेल में महात्मा हंसराज पावन जयंती समारोह समर्पण दिवस श्रद्धा एवं उत्साह के साथ मनाया गया। इस आयोजन का उद्देश्य विद्यार्थियों को महान शिक्षाविद् महात्मा हंसराज जी के त्याग, सेवा और समर्पण से प्रेरित करना था।

प्रातः कालीन प्रार्थना, वैदिक मंत्रोच्चारण तथा महात्मा हंसराज जी के जीवन और उनके शैक्षिक योगदान पर संक्षिप्त उद्‌बोधन प्रस्तुत किया गया।

इसके पश्चात् विद्यालय परिसर में वैदिक हवन का आयोजन किया गया, जिसमें विद्यार्थियों एवं शिक्षकों ने श्रद्धापूर्वक आहुतियाँ अर्पित कर राष्ट्र और समाज की उन्नति की कामना की।

कार्यक्रम का विशेष आकर्षण महात्मा हंसराज जी के जीवन पर आधारित लगभग 8 मिनट का लघु वृत्तचित्र था, जिसका निर्माण विद्यालय के अध्यापक श्री उल्हास द्वारा किया गया। इस प्रेरणादायक प्रस्तुति से विद्यार्थियों को उनके आदर्शों और योगदान के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त हुई।

प्रधानाचार्य श्री सुमंत घोष के मार्गदर्शन में यह कार्यक्रम सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ और विद्यार्थियों के लिए अत्यंत प्रेरणादायक सिद्ध हुआ।

स्वाभिमान ओ३म् स्वावलम्बन

अहं केतु अहमूर्धा अहं उग्रा विवाचनी
"मैं (नारी) राष्ट्र की पताका, राष्ट्र का मस्तक और तेजस्वनी हूँ"

सार्वदेशिक आर्य वीरांगना दल (पंजीकृत)
के तत्वावधान में
शिक्षाविद् डॉ. अमिता चौहान व डॉ. अशोक कु. चौहान के सानिध्य में

राष्ट्रीय वीरांगना प्रशिक्षण शिविर

दिनांक 07 जून 2026 से 14 जून 2026 तक

स्थान : ऐमिटी इंटरनेशनल स्कूल, सैक्टर-44, नोएडा में आयोजित किया जा रहा है।

सरकार ने एक नारा दिया "बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ", हमने शस्त्र और शास्त्र दोनों को उद्देश्य बनाया तथा नारे को पूर्ण किया "बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ, बेटी को सशक्त बनाओ"

सार्वदेशिक आर्य वीरांगना दल ने गत 26 वर्षों से देश के विभिन्न प्रांतों में सफलता पूर्वक कन्याओं को शारीरिक-आत्मिक व आत्मरक्षण प्रशिक्षण देकर उन्हें आत्मनिर्भर व स्वाभिमान से समाज में एक महत्वपूर्ण ढंग से जीवन जीना सिखाया है।

प्रत्येक वर्ष की भांति इस वर्ष भी कन्याओं में शारीरिक, आत्मिक, नैतिक बल एवं वैदिक सिद्धान्तों, संस्कारों का प्रशिक्षण देकर उन्हें राष्ट्र, समाज व परिवार के निर्माण में अहम् भूमिका निभाने हेतु सार्वदेशिक आर्य वीरांगना दल यह शिविर आयोजित कर रहा है।

शिविर के विशेष आकर्षण
शूटिंग, धनुर्विद्या, मार्शल आर्ट्स एवं आर्य जगत के जाने-माने विद्वान और वैदिक विदुषी कंचन आर्या जी द्वारा बौद्धिक उद्‌बोधन

सभी प्रान्तीय सभाओं, जिला समाजों व गुरुकुलों में जहां वीरांगना दल की शाखायें लगती हैं से निवेदन है कि वे अपनी वीरांगनाओं को इस शिविर में भेजें।

उद्‌घाटन : शनिवार 7 जून 2026 मध्याह्न 12:00 से
समापन : रविवार 14 जून 2026 प्रातः 10:00 से दोपहर 1:00 बजे तक

- शिविर स्थल पर 7 जून, प्रातः 10 बजे तक अवश्य पहुँच जायें।
- आयु कम से कम 10 वर्ष
- टार्च, लाठी, साबुन, थाली, कटोरी, मग, गिलास आदि साथ लायें।
- शिविर का गणवेश 2 जोड़ी सफेद सलवार-कमीज, केसरिया दुपट्टा, सफेद पी.टी. शूज़, सफेद मोजे व पहनने के उचित कपड़े साथ लाएं। ऋतु अनुसार बिस्तर भी साथ लायें
- कोई भी शिविरार्थी मोबाइल फोन, कीमती वस्तु व अधिक पैसा साथ न लाएं।
- शिविर शुल्क ₹ 400/- प्रति शिविरार्थी होगा। पाठ्य पुस्तकें शिविर में दी जायेंगी।
- सभी शिविरार्थी अपना नामांकन 03 जून 2026 तक करा लें। भोजन-आवास व्यवस्था निःशुल्क रहेगी।

दानी महानुभावों की सेवा में अपील

आप जानते ही हैं कि इस विशाल रचनात्मक आयोजन में आठ दिन तक चार समय के नाश्ते तथा भोजन प्रबन्ध पर हजारो रूपये प्रतिदिन व्यय हो जाते हैं, जो कि आपके स्नेह व सहयोग से ही पूरा होना है। अतः आपसे अनुरोध है कि राष्ट्र निर्माण के इस यज्ञ को सफल बनाने के लिए आप अपनी ओर से, अपनी आर्य समाज या मित्रों की ओर से अधिक से अधिक सहयोग करवाने की कृपा करें। आप ऋषि लंगर के लिए आटा, दाल, चावल, शुद्ध घी, मसाले, दूध, सब्जी, दलिया आदि के रूप में भी सामान भिजवाकर सहयोग कर सकते हैं। हमें पूरा विश्वास है कि आप अपनी ओर से तथा अपने इष्ट मित्रों से भी अधिक से अधिक सहायता राशि भिजवाने की कृपा करेंगे। धन्यवाद

संयोजक :

साध्वी डॉ. उत्तमायति, प्रधान संचालिका, 09672286863
मृदुला चौहान, संचालिका, 09810702760
आरती खुराना, मंत्री, 09910234595
नीरज कुमारी आर्या, कोषाध्यक्ष, 8920208536
सचिन आर्य, शिक्षक
विकुल राणा, तीरंदाजी
सृष्टि आर्या, शिक्षिका
ऋचा, शूटिंग

शिविराध्यक्ष रेणु सिंह, प्रिंसिपल, ऐमिटी इन्टरनेशनल स्कूल
शिविर संयोजक मोहित कपूर, एडमिन ऑफिसर
व्यवस्था सहयोगी प्रताप सिंह

संस्कृति सेवा

आर्य समाज 150 स्वर्णिम वर्ष

Registration No. R.N.I. 39\57
Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11\6066\2024-25-26
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103\2024-25-26
Posted at L.P.C.(Delhi RMS)D110006 ON Wednesday & Thursday, 2026

डी.ए.वी. शताब्दी महाविद्यालय फरीदाबाद में अन्तर्राष्ट्रीय संगोष्ठी

डी.ए.वी. शताब्दी महाविद्यालय, फरीदाबाद के संस्कृत विभाग एवं भारतीय ज्ञान प्रणाली (Indian Knowledge System IKS) प्रकोष्ठ द्वारा भारतीय दार्शनिक अनुसंधान परिषद (ICPR), नई दिल्ली के अनुदान से दिनांक 11 अप्रैल 2026 को **"भारतीय धर्मबोध की बहुविषयी दार्शनिक पुनर्रचनाः परंपरा, तर्क, नैतिकता एवं समकालीन सामाजिक–राजनीतिक परिप्रेक्ष्य"** विषय पर एक दिवसीय अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी का हाइब्रिड माध्यम (ऑफलाइन एवं ऑनलाइन) में आयोजन किया गया। यह आयोजन केवल एक शैक्षणिक कार्यक्रम न होकर, भारतीय चिंतन परंपरा में निहित 'धर्म' की अवधारणा के पुनर्समीक्षण, पुनर्व्याख्या और पुनर्संवेदन का एक गंभीर दार्शनिक प्रयास था।

श्री अखिलेश मिश्रा, पूर्व भारतीय राजदूत आयरलैण्ड, मुख्य अतिथि के रूप में उपस्थित हुए। डॉ. नरेन्द्र कुमार, कार्यकारी प्राचार्य ने मुख्य अतिथि एवं संगोष्ठी में भाग लेने वाले शोधकर्त्ताओं का स्वागत किया।

यह संगोष्ठी भारतीय दार्शनिक अनुसंधान परिषद् (ICPR), नई दिल्ली के सौजन्य से संपन्न हुई, जिसमें पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला के संस्कृत एवं पालि विभाग ने ज्ञान– सहयोगी (Knowledge Partner) के रूप में महत्वपूर्ण सहभागिता प्रदान की।

पद्मश्री प्रो. हरमोहिंदर सिंह बेदी, कुलाधिपति, केन्द्रीय विश्वविद्यालय, धर्मशाला (हिमाचल प्रदेश), प्रो. सुरेन्द्र कुमार (महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक), प्रो. वीरेंद्र अलंकार (दयानन्द वैदिक शोधपीठ, पंजाबी विश्वविद्यालय, चण्डीगढ़), श्री अखिलेश मिश्रा (आयरलैंड में पूर्व भारतीय राजदूत), डॉ. रवि प्रभात (महर्षि दयानन्द विश्वविद्याल, रोहतक) और श्री विश्वानन्द पुतिया (मॉरीशस) ने अपने बहुमूल्य विचार रखे।

डी.ए.वी. कुरुक्षेत्र में महात्मा हंसराज जयंती

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, कुरुक्षेत्र में महात्मा हंसराज जयंती बड़े श्रद्धा और उत्साह के साथ मनाई गई। इस

अवसर पर विद्यालय परिसर में विशेष हवन का आयोजन किया गया, जिसमें विद्यार्थियों ने बढ़–चढ़कर भाग लिया। सभी अध्यापकगण भी इस पावन अवसर पर उपस्थित रहे और वातावरण को आध्यात्मिक ऊर्जा से भर दिया।

कार्यक्रम की शुरुआत विद्यालय के धर्म शिक्षक श्री ओमवीर शास्त्री के द्वारा वैदिक मंत्रोच्चारण के साथ हवन से हुई। शिक्षकों ने महात्मा हंसराज जी के जीवन और उनके आदर्शों के बारे में विस्तार से बताया। बच्चों को उनके त्याग, सेवा और शिक्षा के प्रति समर्पण से प्रेरणा लेने के लिए प्रोत्साहित किया गया।

विद्यालय की प्राचार्या श्रीमती गीतिका जसूजा ने अपने संबोधन में कहा कि महात्मा हंसराज जी ने शिक्षा के क्षेत्र में जो योगदान दिया है, वह सदैव प्रेरणादायक रहेगा। उन्होंने विद्यार्थियों से उनके आदर्शों को अपनाने और जीवन में अनुशासन एवं नैतिक मूल्यों को महत्व देने का संदेश दिया।

कार्यक्रम का समापन शांति पाठ के साथ हुआ।

के पी ए के महाविद्यालय अम्बाला में नए सत्र पर यज्ञशाला का उदघाटन

के पी ए के महाविद्यालय अम्बाला में नए सत्र के शुभारंभ व नई यज्ञशाला के उदघाटन समारोह पर यज्ञ का आयोजन किया गया।

इस अवसर पर विद्यालय के

चेयरमैन श्री जे.एस.नैन व मैनेजर डॉ. विकास कोहली यजमान रूप में उपस्थित रहे। प्रधानाचार्या सहित सभी अध्यापक–अध्यापिकाओं, विद्यार्थियों ने यज्ञ में आहुतियां अर्पित कीं।

श्री जे.एस.नैन व मैनेजर डॉ. विकास कोहली जी के करकमलों से विद्यालय में नई यज्ञशाला का भी उदघाटन हुआ। श्री जे.एस.नैन ने विद्यार्थियों को नये सत्र के शुभारंभ पर आशीर्वाद दिया। और कहा कि डी.ए.वी. से पढ़े हुए विद्यार्थी हर क्षेत्र में आगे रहते हैं। विद्यालय की अध्यापिकाओं को संबोधित करते हुए उन्होंने कहा कि आप बहुत भाग्यशाली हैं कि आप डी ए वी संस्था से जुड़े हैं। इस विद्यालय के 105वें नए सत्र के शुभारंभ पर मेरा आपको यही आशीर्वाद है कि आपने पूरी निष्ठा और जोश से विद्यालय को ऊंचाइयों पर ले जाना है।

यज्ञ के उपरांत सबको प्रसाद वितरित किया गया।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा मंदिर मार्ग के लिए **एस.के शर्मा** द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित **फर्स्ट इम्प्रैशन कार्पोरेट सर्विसिज, (प्रा.) लि.,** ई.113–114, सैक्टर–63, नोएडा, उ.प्र.–201301 (दूरभाष : 120–4246315) से मुद्रित एवं कार्यालय **'आर्य जगत्'** आर्यसमाज भवन मंदिर मार्ग नई दिल्ली से प्रकाशित मो.–9868894601, 23362110, 23360059 सम्पादक – **पूनम सूरी**